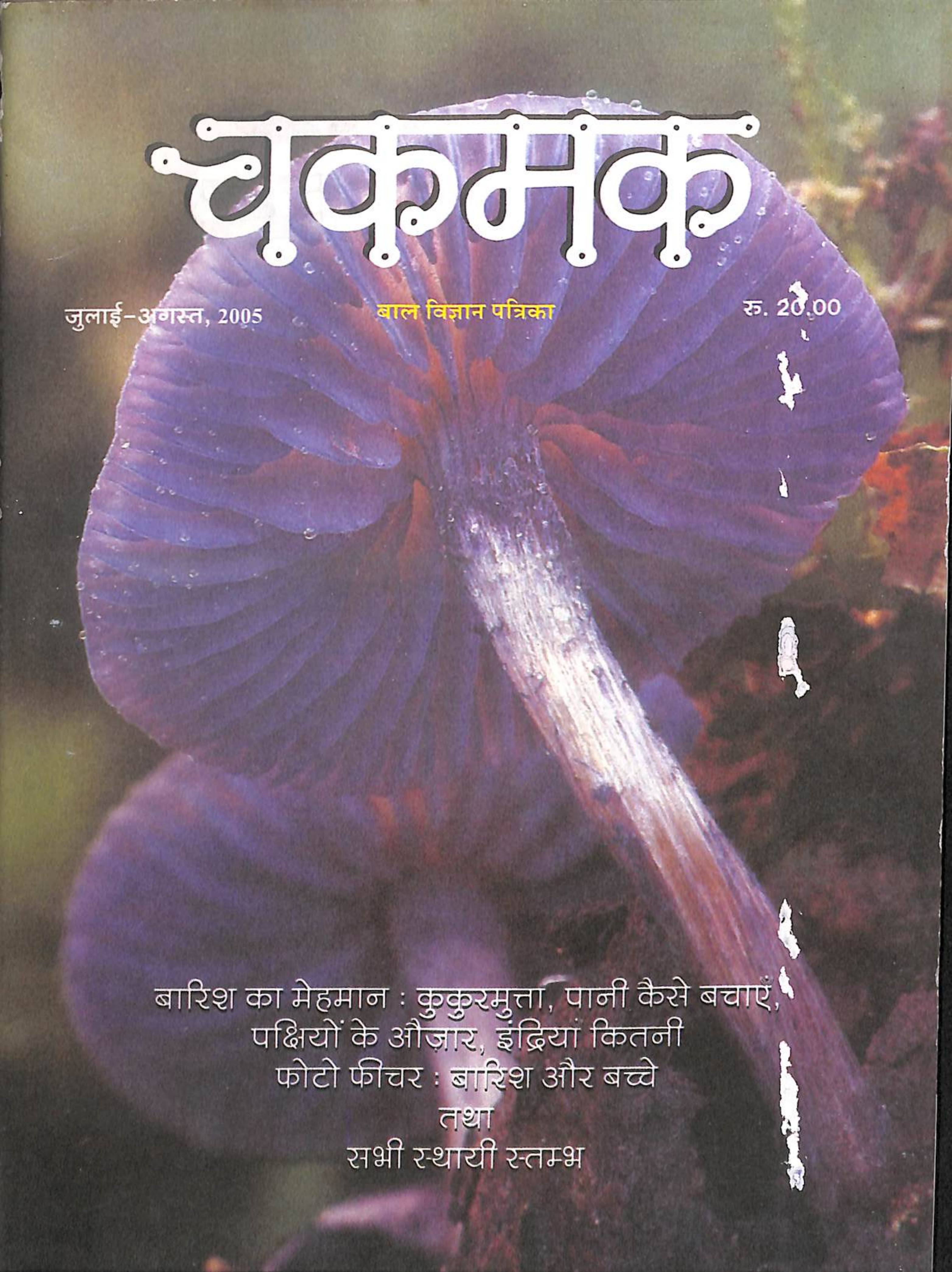


चकमक

जुलाई–अगस्त, 2005

बाल विज्ञान पत्रिका

रु. 20.00

बारिश का मेहमान : कुकुरमुत्ता, पानी कैसे बचाएं,
पक्षियों के औज़ार, इंद्रियां कितनी
फोटो फीचर : बारिश और बच्चे
तथा
सभी स्थायी स्तम्भ



मानस बघेल, पहली, भोपाल



(नाम, पता नहीं लिखा)



धर्मेन्द्र, देवास, म.प्र.

क्या-क्या है इस अंक में...

चकमक

विशेष लेख

पानी रे पानी!	8
इंद्रियाँ कितनी	16
वर्षामापी	35
हम किसी से कम नहीं	48
कुकुरमुत्ता	64

कहानी

गधा चाहता है	14
लाखों का स्वामी	22
आलापल्ली के हाथी	36
चिड़िया और लोमड़ी	59
चित्रकथा	62

कविताएँ

दोस्त बनाना पड़ते हैं	19
मेरी बकरी	30
नाव लहर में	50
पानियों की गाड़ियों में...	58

फोटो फीचर

बारिश और बच्चे	32
सिनेमा सिनेमा	42



हर बार की तरह

इस अंक में	1
इस बार की बात	2
मेरा पन्ना	3
सवालीराम	20
प्रयोगशाला	24
पुस्तक अंश	26
माथापच्ची	38
तुम भी बनाओ	44
चित्र पहेली	56
मम्मी-पापा जब बच्चे थे	46
बारिश की कहावतें	51
चकमक समाचार	52
अधूरी कविता...	63

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा और जनविज्ञान के क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यावसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

इस बार की बात...

दोस्तो,

तुम्हारा पसंदीदा, खिलंदड़, रुनझुन बारिश का मौसम आ गया है। तपते दिनों के बाद बारिश का कितना इंतज़ार होता है। बारिश अकेली नहीं आती। अपनी पूरी मण्डली के साथ आती है। हज़ारों छोटे-छोटे पौधे ज़मीन से झाँकने लगते हैं। सैंकड़ों पौधों में बारिश के गिरते झट से फूल आ जाते हैं जैसे वे डाली के अंदर पहले ही फूल गए थे और उन्हें सिर्फ बारिश का इंतज़ार था। कितनी तितलियाँ, कीड़े, गिंजाई, मेंढक, कागज़ की कश्ती, गेड़ी, छाते अचानक दिखने लगते हैं। हर तरफ कुछ न कुछ नया दिखता है। स्कूल में भी नई किताबें, नए दोस्त, नए शिक्षक, कभी-कभी नया स्कूल। तुम्हारे यहाँ बारिश में कौन-कौन-सी नई चीज़ें दिखने लगती हैं?

पर हर साल इसी बारिश में हमारे कितने ही लोग बाढ़ आदि मुश्किलों से जूझते हैं। हज़ारों के घर, खेत, मवेशी बह जाते हैं। दो दिन पहले हमारी एक दोस्त जो पहली में पढ़ती है पूछ रही थी- *बाढ़ कहाँ रहती है? और फिर कहाँ चली जाती है?*... तुम्हें मालूम है? तुम सोचना और अपने बड़ों या शिक्षकों से भी पूछना। हाँ लेकिन इन्हीं मुश्किलों से नए रास्ते भी निकलते हैं। हम सीखते हैं। नई उम्मीदें बँधती हैं। तुमने शायद पढ़ा होगा एक व्यक्ति राजेश सेठ ने अपने दोस्तों के साथ बाढ़ में फँसे चार सौ लोगों को बचाने के लिए दिन-रात एक कर दिए।

इस बारिश नए आसपास के साथ चकमक में भी नई उम्मीदें आई हैं। चकमक टीम में दो नए सदस्य जुड़े हैं- हिन्दी के मशहूर कहानी लेखक स्वयं प्रकाश और कवि-कथाकार संगीता गुंदेचा। स्वयं प्रकाशजी एक पाठक के तौर पर चकमक से लम्बे समय से जुड़े रहे हैं। इन नए साथियों के आने से निश्चित ही चकमक में तुम्हें सकारात्मक बदलाव दिखेंगे।

यह अंक जुलाई-अगस्त का संयुक्त अंक होगा। अब हर अंक तुम्हें महीना शुरू होने के एक हफ्ते पहले ही मिल जाया करेगा। यानी सितम्बर का अंक तुम्हें अगस्त के आखिरी सप्ताह तक मिल जाएगा।

तुम्हारे पत्रों और रचनाओं के बारे में भी तुमसे कुछ कहना है वो यह कि तुम्हारे कई पत्रों, रचनाओं में **पूरा पता** नहीं लिखा होता है। इस कारण कई बार हम तुम्हारी रचनाओं के छपने की खबर तुम तक नहीं पहुँचा पाते हैं। उम्मीद है तुम इसका ख्याल रखोगे। हाँ एक और बात! अब से हमारी कोशिश होगी कि तुम्हारी हर रचना, हर पत्र के बारे में तुमसे पत्र के ज़रिए बात करें। हमें भी तुम्हारे पत्रों व रचनाओं का बड़ा इंतज़ार रहता है। इन पत्रों से ही तो हम तुम्हारे मन की बातें जान पाते हैं। इन्हीं पत्रों के माध्यम से तुम्हारे बड़े यह जान पाते हैं कि तुम कैसी दुनिया चाहते हो, अपने आसपास के बारे में तुम क्या सोचते हो, तुम्हें क्या अच्छा और बुरा लगता है। यानी ये पत्र तुम्हारी आवाज़ हैं।

उम्मीद है एक दिन तुम्हारी आवाज़ बुलंद होगी...

तुम्हारा

सुशील

चकमक

मासिक बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष 20 - अंक-11, जुलाई-अगस्त 2005

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता

एकलव्य

ई-7/एचआईजी-453,

अरेरा कॉलोनी,

भोपाल-462 016 (म.प्र.)

फोन - 2463380

eklavyamp@mantrafreenet.com

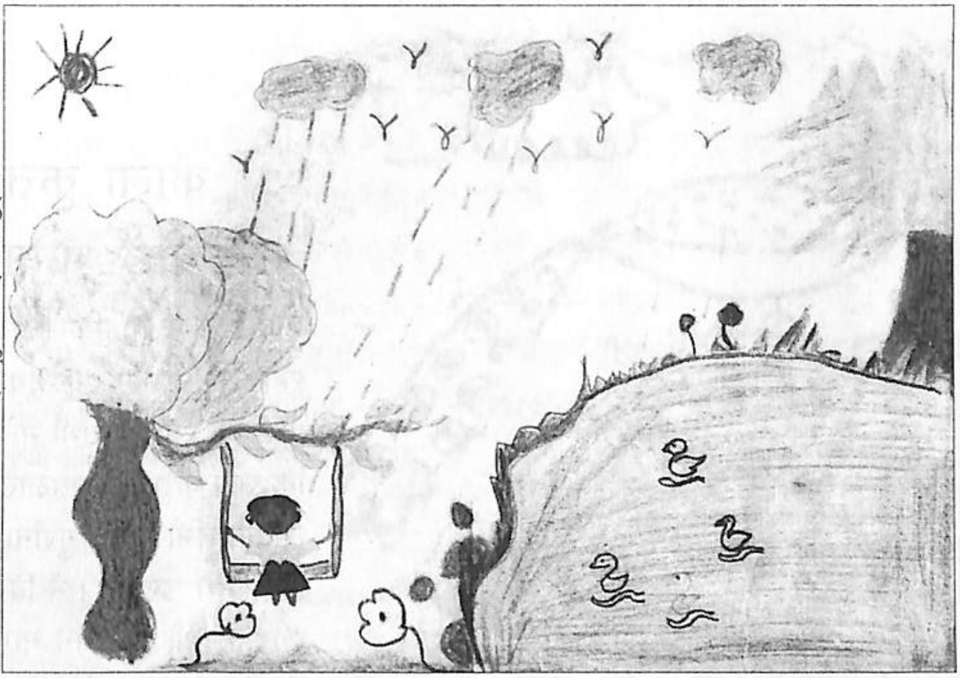
कवर का कागज़ - यूनीसेफ के सौजन्य से

चंदे की दरें

एक प्रति	10.00 रुपए
छमाही	50.00 रुपए
वार्षिक	100.00 रुपए
दो साल	180.00 रुपए
आजीवन	1000.00 रुपए

सभी में डाक खर्च हम देंगे।

चंदा, मनीऑर्डर/ड्राफ्ट/चैक से एकलव्य के नाम पर भेजें। भोपाल से बाहर के चैक में बैंक चार्ज 30.00 रुपए अतिरिक्त जोड़ें।



ज्योति पाण्डे, आठवीं, भोपाल, म.प्र.

चुटकुले

जीतू (मीनू को)- दोस्त, तुम तो छोटी-छोटी बात पर लाल-पीले हो जाते हो।

मीनू- क्या करूँ दोस्त, मेरा जन्म ही होली के दिन हुआ है।



गीतिका वर्मा, चौथी, झाँसी, उ.प्र.

रोमी (अभी को)- अभी पहले तो रात को मच्छर काटते थे, अब दिन को भी काटते हैं।

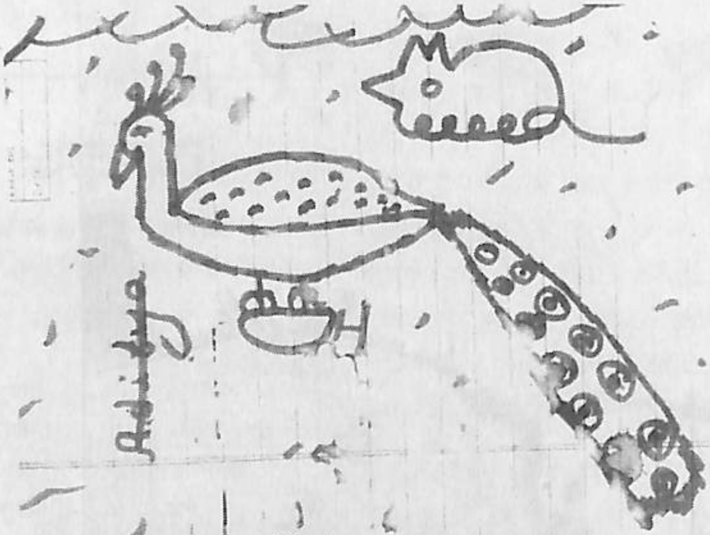
अभी- अब महँगाई बढ़ गई है, उनको रात और दिन का काम करना पड़ता है।

- वीरपाल कौर, फरीदाबाद, पंजाब

एक आदमी बोला- बेटे तू रोड पर मत चला कर। नहीं तो बस या कार के नीचे आ जाएगा।

बेटा बोला- पिताजी मेरे ऊपर से तो हेलीकाप्टर, हवाई जहाज निकल जाते हैं तो यह तो छोटे-छोटे वाहन हैं।

-आनंद परमार, खातेगाँव, देवास, म.प्र.



एकता, दूसरी, भोपाल, म.प्र.

काला कुत्ता पीछे भागा

एक दिन मैं साइकिल चलाने जा रही थी। जब मैं एक दुकान के पास जा रही थी तभी मैंने सोचा कि उस कुत्ते को सहलाऊँ। लेकिन तभी उसने गुर्राना शुरू किया। मैं डर गई। मैं बिना चप्पल की आई थी और मैंने भागना शुरू किया। तब तक वो मेरे पास आ चुका था। पर उसने मुझे नहीं काटा। और फिर मैं और मेरी दोस्त खेलने लगे। और फिर वो अपने पापा के साथ अपने घर चली गई।

- संक्षेपिका झा, भोपाल, म.प्र.

फूलों के नाम खोजो

- गुल गुला बहुत स्वादिष्ट पकवान है
- रिचा मुझसे कम लम्बी है
- जूडो-कराटे सूमो का खेल नहीं है।
- सोने की चमक ने रमेश को लालची बना दिया।
- कम्मो गरारा कर रही है।

अश्विनी खरे, पाँचवीं, राँझी, जबलपुर, म.प्र.

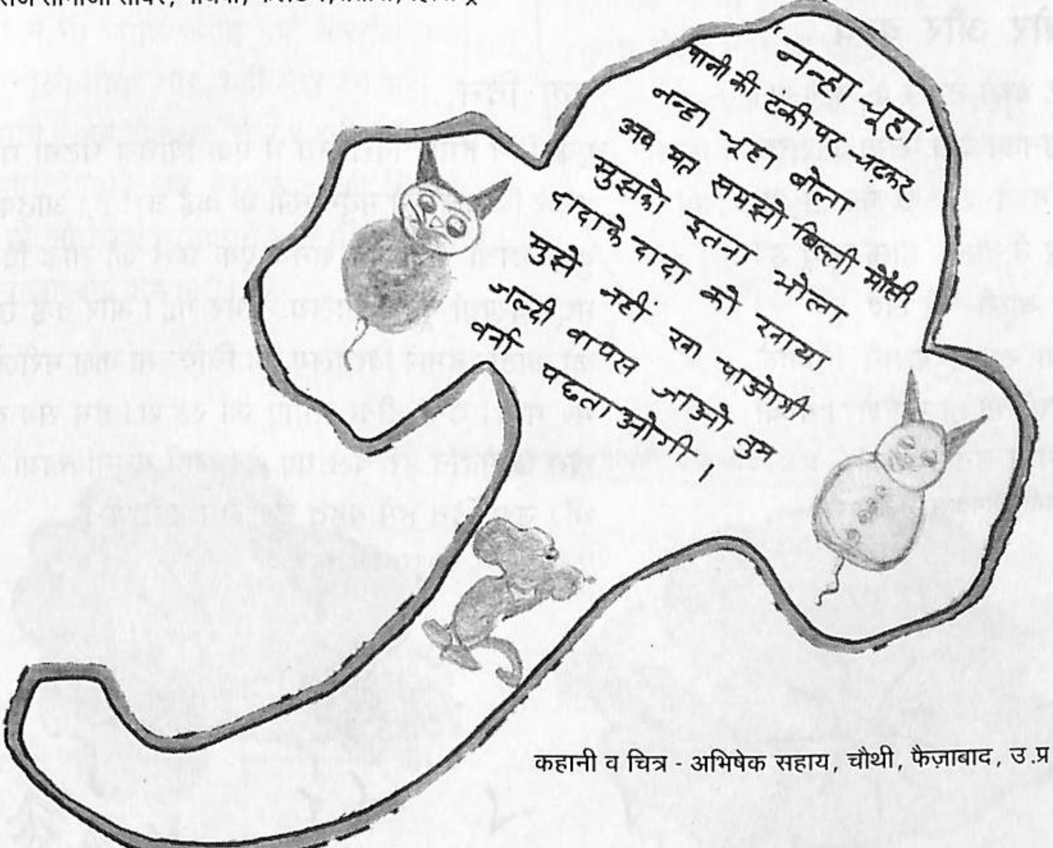


दीपक वैभव, आठवीं, नयापुरा, देवास, म.प्र.

मेरा ज्वारी का खेत

हमारी कक्षा पाँचवीं है। हमारी शिक्षिका ने हमें जोंघलायाचे झाड़ (ज्वारी का पेड़) यह पाठ पढ़ाया और कहा- घर पर भी ज्वारी बोना। मैंने अगले दिन ज्वारी ली और एक गड्ढा खोदा। उसमें ज्वारी के दाने डाले। थोड़े दिनों में हरे-हरे घास जैसे पेड़ आए। मुझे बहुत खुशी हुई। मैंने माँ को, दादा-दादी को सभी को बताया। मैं उसे रोज पानी डालता हूँ। अब वह मेरे बराबर लम्बे हो गए हैं। उसमें सात-आठ ज्वारी के भुट्टे जैसे लगे हैं। अब हमारी मराठी की बाई आशाताई मेरा ज्वारी का खेत देखने आने वाली हैं। फिर हम सब बच्चे उसमें से ज्वारी निकालकर स्कूल में छोटी-छोटी रोटी बनाने वाले हैं।

- विराज तानाजी तावरे, पाँचवी, फलटण,सतारा,महाराष्ट्र



कहानी व चित्र - अभिषेक सहाय, चौथी, फैज़ाबाद, उ.प्र.

आलस्य

एक दिन मैं घर से खाना खाकर स्कूल गया। तो हमारे गुरुजी ने कहा आप लोग हमें अंग्रेजी की इक्कीस नकल लिख कर दिखाओ। मेरा दोस्त अर्जुन ने इक्कीस नकल दो घण्टे पाँच मिनिट में लिख कर दिखा दी और मैं नहीं लिख पाया। क्योंकि मुझे आलस्य आ रहा था। गुरुजी ने कहा नकल क्यों नहीं कर रहे हो। मैंने कहा। गुरूजी कहने लगे - तुम सुबह से नित्य तीन मिनिट दौड़ना। तुम्हें आलस्य नहीं आएगा। और मैं तीन मिनिट दौड़ता हूँ। इससे मुझे आलस्य नहीं आता है और मैं जब भी कोई काम करता हूँ तो मुझे आलस्य नहीं आता है।

रोहित परमार, छठवीं, देवास, म.प्र.



राहुल जादौन,सातवीं, भोपाल, म.प्र.

शेर और बच्चे

दो छोटे बच्चे टेबल के नीचे थे। शेर ने उनको देख लिया और खा लिया। बच्चे शेर के पेट में आ गए। शेर ने बोला- हाऊ डू यू डू। बच्चों ने बोली- वी लव यू। शेर हुआ खुश। उसने निकाले बच्चे। बच्चे भी हो गए शेर। बच्चों का हो गया उनसे मेल।

-तारा रस्तोगी, भीमताल, नैनीताल

एक दिन...

एक दिन हमारे विद्यालय में एक विचित्र घटना घटी। हमारे विद्यालय में मधुमक्खी के कई छत्ते हैं। आठवीं के कुछ छात्रों नें खेलते समय एक छत्ते को तोड़ दिया। मधुमक्खियाँ पूरे विद्यालय में भर गईं। और कई छात्रों को काटा। हमारे विद्यालय का चिकित्सा कक्ष मरीज़ों से भर गया। उन्हें टीके लगाए जा रहे थे। हम सब बच्चे खेत के मैदान पर चले गए थे। जहाँ मधुमक्खियाँ नहीं थीं। उस दिन हमें बहुत डर लग रहा था।

शिरीन, छठीं, जयपुर, राजस्थान



राहुल पाण्डे, पाँचवीं, भोपाल, म.प्र.

अगर मैं बादल होती

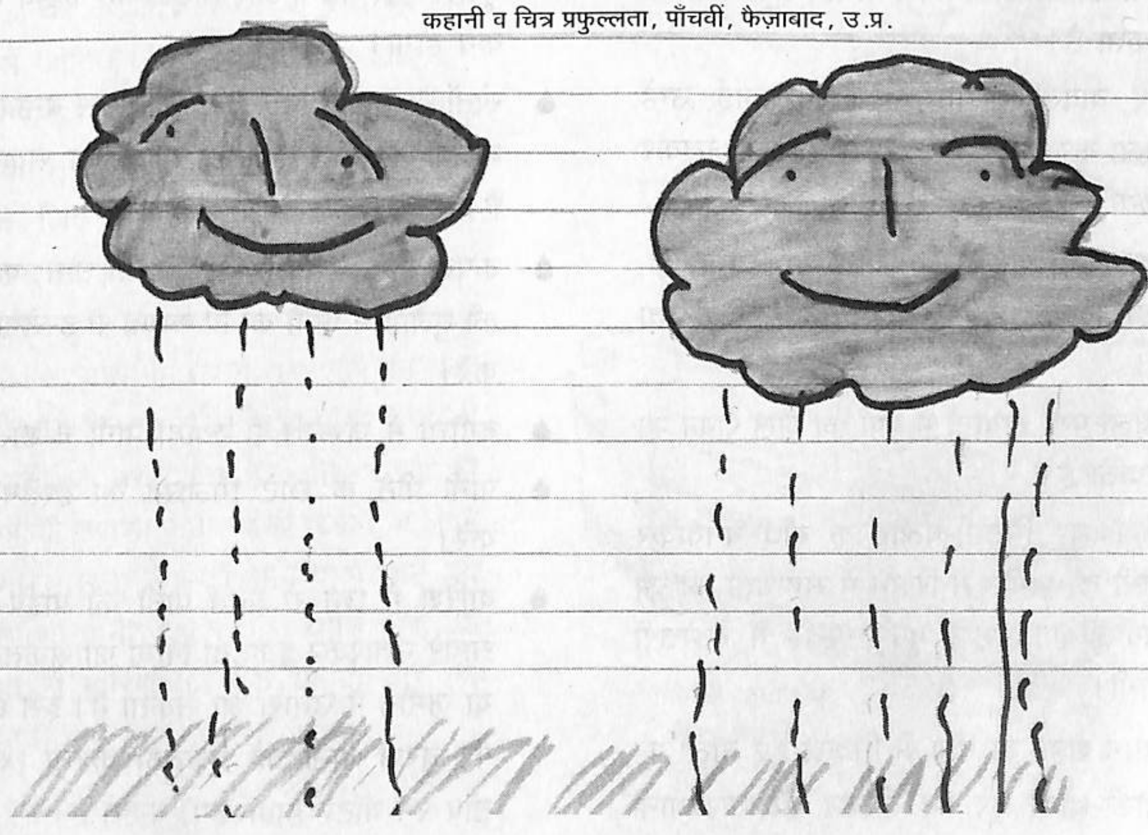
आकाश में मुझे नीले-नीले बादल दिख रहे थे। इन नीले बादलों को देखकर मेरा मन भी बादल बनने का हो गया। अगर बादल होती तो मैं भी आकाश में इसी तरह उड़ती चली जाती। मेरे साथ-साथ चिड़िया, मैंना, तोता भी उड़ते। बादलों की तरह मैं भी जगह-जगह वर्षा करती। कहीं मेरा रंग नीला होता और कहीं मेरा रंग भूरा या काला होता। जब मैं जोर से गरजती तो बच्चे डरकर भाग जाते। जब मेरे अंदर की बिजली गरजती तो लोग डरकर अपने घरों में घुस जाते और दरवाजा बंद कर लेते।

कुत्ते की सगाई

कुत्ते की जब हुई सगाई
कानी बिल्ली मौसी आई।
बिल्ली बोली आजा भैया,
मैं भी ले लूँ तेरी बलैयाँ
कुत्ता बोला मान भी जाओ
महूरत खराब तुम न कराओ
तुम जो लोगी मेरी बलैया
फिर तो डूबी मेरी नैया।

- धानी गुन्देचा,छठीं, भोपाल, म.प्र.

कहानी व चित्र प्रफुल्लता, पाँचवी, फैज़ाबाद, उ.प्र.



पानी रे पानी..!





शगुन भार्गव, पहली, भोपाल, म.प्र.

पानी की समस्या हम सबके लिए एक गंभीर चुनौती है। वास्तव में देखा जाए तो हम में से अनेक इसके लिए ज़िम्मेदार हैं। अपनी दैनिक आदतों में थोड़ा-सा बदलाव या सुधार लाने से भारी मात्रा में पानी की बचत की जा सकती है। हम जहाँ हैं, वहीं पानी के दुरुपयोग को रोक सकते हैं।

पानी और पर्यावरण को बचाने की दिशा में सबसे ज़रूरी है लोगों के सोचने के ढंग और आदतों में बदलाव आना। कई लोगों का यह सोचना ठीक नहीं है कि थोड़े-से पानी की बचत से क्या फर्क पड़ेगा। पानी की एक-एक बूँद कीमती है।

क्या तुम अपने घर के सदस्यों, दोस्तों, पड़ोसियों को पानी की बचत के लिए प्रेरित कर सकते हो? उन्हें ये बातें बताओ और खुद भी जितना हो सके इन बातों का ध्यान रखो।

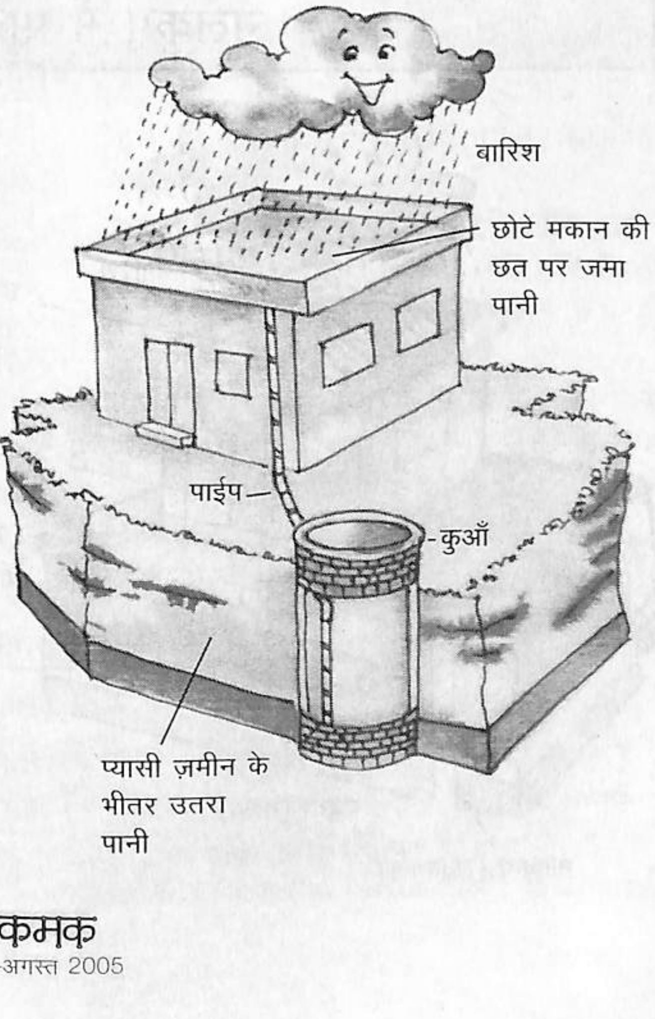
- हैण्डपम्प को चलाते समय फालतू बहने वाले पानी को गड्ढा बनाकर ज़मीन में उतारा जा सकता है।
- कुएँ, बावड़ी, तालाब, नदी की सफाई, उन्हें गहरा करने का काम आपस में मिल-जुलकर किया जा सकता है।
- जिन कुएँ, बावड़ियों में पानी नहीं आता हो, वहाँ नलकूप (ट्यूबवेल) खुदवाया जा सकता है।
- खाली पड़ी खदानों में वर्षा का जल रोका जा सकता है।
- नालों पर मिट्टी-पत्थर के बाँध बनवाकर पानी को ज़मीन में रिसने में सहायता की जा सकती है। इससे भूजल स्तर में बढ़ोत्तरी होगी।
- अपने शहर या गाँव से निकले हुए नालों पर थोड़ी-थोड़ी दूर पर बोल्डर डालकर पानी की रफ्तार कम की जा सकती है। इससे भूजल स्तर बढ़ेगा और मिट्टी का कटाव भी कम होगा।
- खेतों के ढलान वाले कोने में पोखर बनाकर बारिश का जल इकट्ठा किया जा सकता है।
- कपड़े धोने, बर्तन माँजने, नहाने-धोने, फर्श की धुलाई में पानी का किफायत से इस्तेमाल करें।
- बगीचों में ज़रूरत से ज़्यादा पानी न डालें।
- पानी पीने के छोटे गिलासों का इस्तेमाल करें।
- बारिश में छत से बहते पानी को पाईप के सहारे उतारकर इकट्ठा किया जा सकता है या ज़मीन में उतारा जा सकता है। इसे **छत पर बरसे पानी को इकट्ठा करना** (रूफ टॉप रेन वॉटर हार्वेस्टिंग) कहते हैं।

क्या है छत पर बरसे पानी को इकट्ठा करना

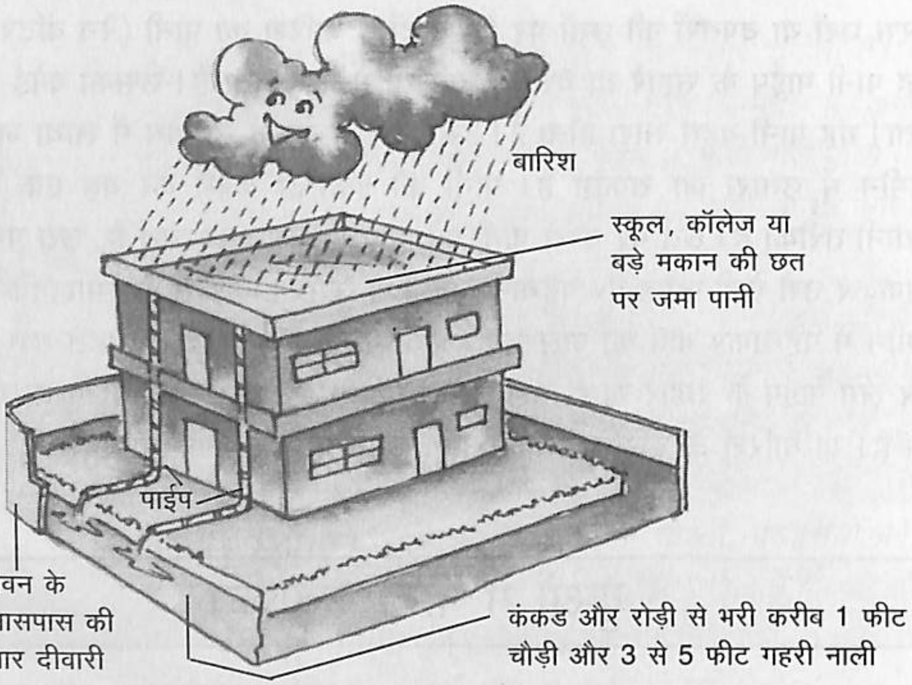
हर बरस घरों या दफ्तरों की छतों पर (रूफ टॉप) बारिश का पानी (रेन वॉटर) जमा होता है। यह पानी पाईप के सहारे या वैसे ही नालियों में बह जाता है। उसका कोई उपयोग नहीं हो पाता। यह पानी बहुत सारा होता है। इसे इकट्ठा करके उपयोग में लाया जा सकता है। या ज़मीन में उतारा जा सकता है। पानी को इकट्ठा करने का यह एक बहुत पुराना राजस्थानी तरीका है। छत पर बरसे पानी को इकट्ठा करने का अर्थ है, छत पर बरसे पानी को साफकर उसे ऐसी जगह पर पहुँचाना, जहाँ से उसका फिर से इस्तेमाल किया जा सके। या ज़मीन में पहुँचाकर वहाँ का जलस्तर बढ़ाया जा सके। बारिश में बहते छत के पानी को फिल्टर लगे पाईप के सहारे खाई, नलकूप, हैण्डपम्प, बोरवेल, कुएँ या गड्ढे में उतारा जा सकता है। या बारिश के दौरान उसका सीधा उपयोग किया जा सकता है।

कुओं में पानी उतारना

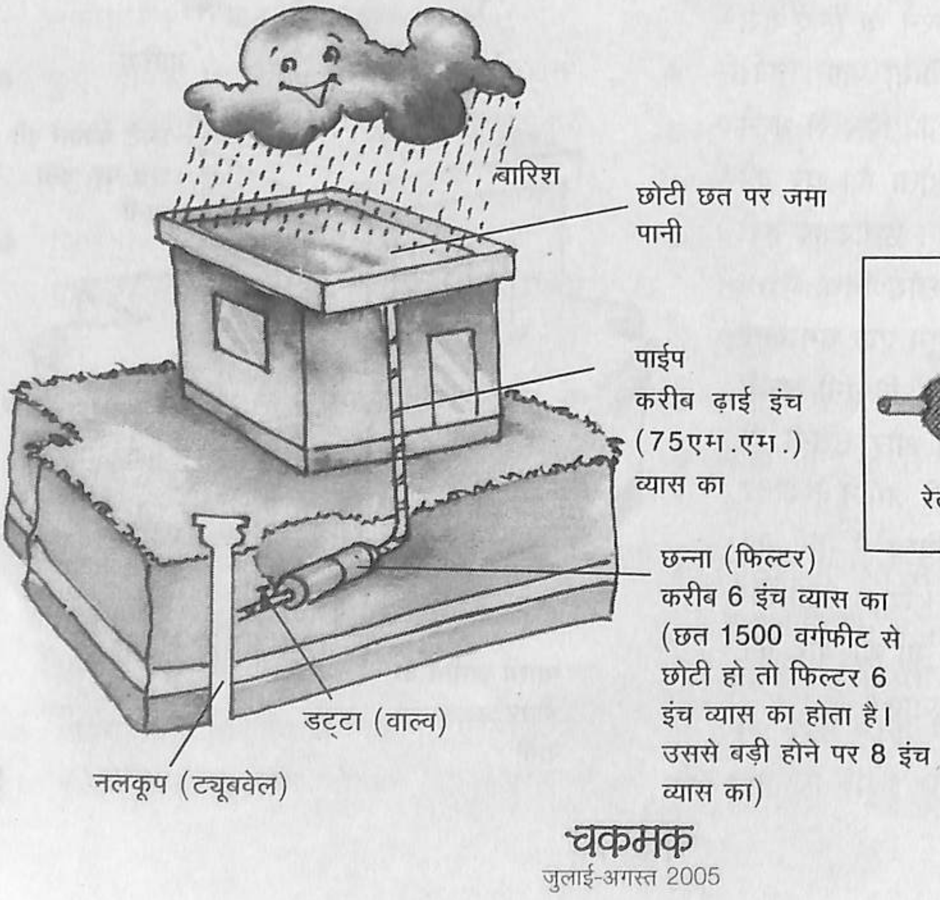
घर के अंदर या बाहर कुओं को फिर से जीवित (रीचार्ज) करने के लिए इस तरीके का इस्तेमाल किया जाता है।। यह तरीका सूखे कुओं को फिर से भरने के लिए भी उपयोगी होता है। घर की छत से एक पाइप लाइन उतारकर उसे सीधे कुएँ की तली में छोड़ दिया जाता है। बरसात के दौरान तुम एक चमत्कार देखोगे कि वह सूखा कुआँ कितनी जल्दी पानी से भर जाता है। और उतनी ही जल्दी उसका पानी प्यासी ज़मीन के अंदर भी उतरता है। जो भविष्य में कुएँ को हमेशा पानी देता रहेगा। ध्यान रखो कि पहली बारिश का एक या दो बार का पानी कुएँ में न उतारा जाए।

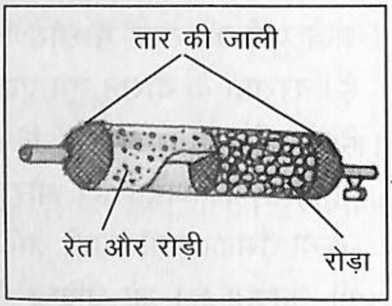


खाई बनाकर भूजल स्तर में बढ़ोत्तरी करना

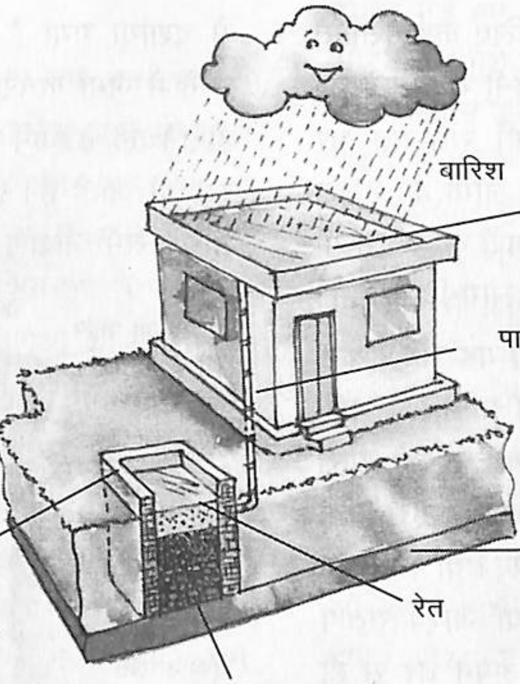


नलकूप में पानी उतारना





ज़मीन में पानी उतारने का गड्ढा



छत से मिलनेवाले बारिश के पानी के फायदे -

1. अंतर्राष्ट्रीय जल संस्थान (आई.डब्ल्यू.आई.) ने छत से मिलने वाले बरसात के पानी को दूसरे स्त्रोतों से मिलने वाले पानी की तुलना में बेहतर बताया है।
   अंतर्राष्ट्रीय जल संस्थान केमिकल लेब की रपट बताती है कि इस पानी में घातक लवण नहीं होते। उसमें हानिकारक कीटाणु भी नहीं होते। इस पानी का पीएच 6.95 होता है। यानी यह पानी न तो ज्यादा अम्लीय होता है न ज्यादा क्षारीय।
2. इस तकनीक से भूजल के गिरते स्तर को रोका जा सकता है।
3. बोरवेल का पानी यदि खारा है क्योंकि उसमें क्लोराईड, फ्लोराईड, सल्फेट आदि होते हैं, तो बारिश के पानी से उसका खारापन कम हो जाता है।
4. घनी आबादी वाली जगहों पर बारिश का पानी बहकर नालों को जन्म देता है। इससे कई तरह की बीमारियाँ फैलती हैं। अगर यह पानी छत से सीधे सही जगह पर पहुँच जाए, ये परेशानियाँ कम हो जाएँगी।

सभी चित्र - विवेक वर्मा

कहाँ न करें छत पर बरसे पानी को इकट्ठा -

नदियों के पास वाले इलाकों में भूजल स्तर अच्छा होता है। वहाँ छत पर इकट्ठा बारिश के पानी को ज़मीन में पहुँचाने ज़रूरत नहीं होती। या ऐसा करने से पहले विशेषज्ञों की राय लेना चाहिए। जहाँ काली मिट्टी हो, वहाँ भी इसे करने से पहले विशेषज्ञों से पूछ लेना चाहिए। क्योंकि काली मिट्टी नमी को सोखती है। इसलिए वहाँ का भूजल स्तर सामान्य तौर पर ठीक रहता है।

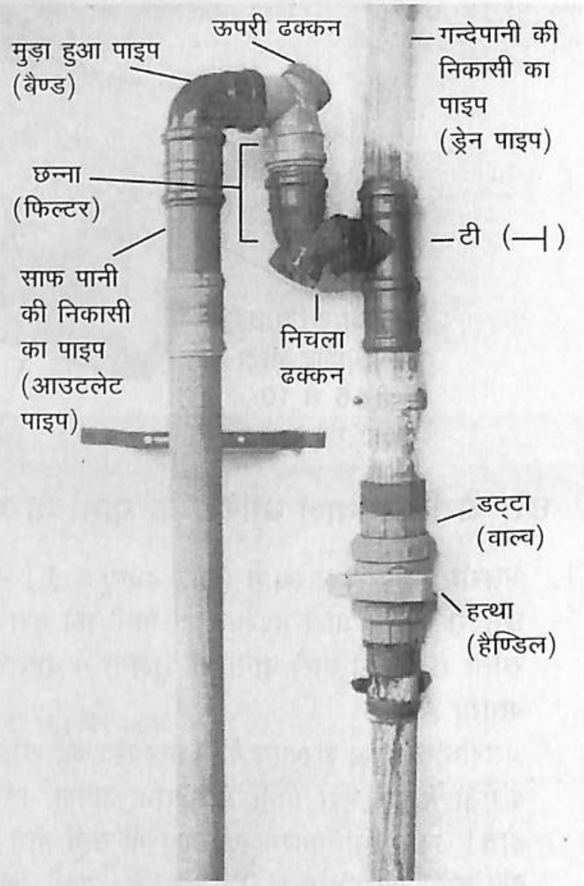
कीमती पानी यूँ न बह जाने दें

गर्मी में लोगों को पानी के लिए कई मुसीबतें उठानी पड़ती हैं। कहीं तुम्हें पानी के बर्तनों की लम्बी कतारें दिखी होंगी। कहीं रात-रात भर जागकर पानी की जुगाड़ करते लोगों का हल्ला सुनाई दिया होगा। नवतपा की भरी दुपहरी में भी पानी के लिए घण्टों धूप में खड़े लोग दिखे होंगे।

भोपाल के संतोष वर्मा ने भी यह सब देखा। उन्होंने सोचा कि एक ओर तो पानी की भारी किल्लत है। दूसरी ओर बारिश का ढेर सारा पानी यूँ ही बर्बाद हो जाता है। क्यों न इस पानी को उपयोग के लायक बनाया जाए। या ज़मीन में पहुँचाकर भूजल स्तर को बढ़ाया जाए। संतोष वर्मा ने पानी की बचत के लिए अपने घर से ही शुरूआत करने की ठानी। आओ देखें उन्होंने क्या किया।

संतोष वर्मा भोपाल के कोलार रोड़ की आशीर्वाद कॉलोनी में रहते हैं। उनका एक मंज़िला मकान है। जिसमें छत से लगभग 10 फीट का एक पीवीसी पाइप जुड़ा था। यह पाइप बारिश में जमा छत के पानी को बहाकर नाली तक ले जाता था। इसे हम गन्दे पानी की निकासी का पाइप (ड्रेन पाइप) कह सकते हैं। गन्दे पानी की निकासी के इस पाइप को संतोष ने दो जगहों से काटा। एक बीचोंबीच से और दूसरा उसके लगभग एक फीट ऊपर से। कटे हुए पीवीसी पाइप के ऊपरी हिस्से में एक टी लगायी। (चित्र में टी की आकृति —| ऐसी दिख रही है।) टी से एक छन्ना (फिल्टर पाईप) जोड़ा।

छन्ना (फिल्टर पाइप) में दो ढक्कन हैं। जिन्हें ऊपरी ढक्कन और निचले ढक्कन के नाम से दर्शाया गया है। इन ढक्कनों को खोलकर छन्ने में जमा कचरा साफ किया जाता है। साथ ही निचले ढक्कन को खोलकर वहाँ फिटकरी रख दी जाती है। इससे पानी साफ हो जाता है और उसमें जीवाणु भी नहीं होते। छन्ने से एक



मुड़ा हुआ पाइप (बैण्ड) जोड़ा। मुड़े हुए इस पाइप से अन्दाज़न 20 फीट लम्बा पीवीसी पाइप जोड़ा। चित्र में इस पाइप को साफ पानी की निकासी का (आउटलेट पाइप) कहा गया है।

10 फीट के गन्दे पानी की निकासी के पीवीसी पाइप को ऊपर दो जगहों से काटा गया था। ऊपरी हिस्से पर छन्ना लगाया गया। निचले कटे हिस्से पर एक डट्टा (वाल्व) लगाया। डट्टे के

साथ एक हैण्डिल लगाया। इस हैण्डिल को घुमाकर छत से बहकर आ रहे पानी को रोका या बहाया जा सकता है।

पानी का छत से नलकूप तक का सफर - सबसे पहले संतोष वर्मा ने बारिश आने से पहले छत को झाड़-पोंछकर साफ किया। फिर उस पर पोटेशियम परमेग्नेट (जिसे बुज़ुर्ग लाल पाउडर कहते हैं) छिड़क दिया। पोटेशियम परमेग्नेट पानी को साफ करता है और जीवाणुओं को मारता है।

बारिश आने पर छत का पानी सीधा गन्दे पानी के पाइप में उतर आया। वाल्व के साथ लगे हैण्डिल को घुमाकर संतोषजी ने एक-दो बार की बारिश का पानी वैसे ही बह जाने दिया। फिर हैण्डिल घुमाकर इस बहाव को बन्द कर दिया। वाल्व बन्द होने पर पानी छन्ने में भरने लगा। छन्ने में एक के बाद एक लगी चार जालियों से पानी साफ होकर मुड़े हुए पाइप की ओर गया। मुड़े हुए पाइप से निकलकर पानी पीवीसी पाइप में पहुँचा। पीवीसी पाइप बोरवेल से जुड़ा होने के कारण पानी सीधा बोरवेल में पहुँच गया।



इससे बोरवेल में पानी का स्तर बढ़ गया। आसपास की ज़मीन में भी पानी उतरा। साथ ही बोरवेल के खारे पानी में बारिश का पानी मिल जाने से उसका खारापन कम हो गया।

इस सारे काम में संतोष वर्मा के कुल बारह सौ रुपए खर्च हुए। दो सौ रुपए का पीवीसी पाइप और एक हज़ार रुपए का फिल्टर। ●

कुछ तथ्य...

आज भी पृथ्वी पर उतना ही पानी है जितना तीन अरब साल पहले था।

पृथ्वी पर ताजे पानी की मात्रा कुल 3% है। उसमें भी सिर्फ 1% हमारे उपयोग के लायक है।

हमारे शरीर में पानी की मात्रा 66% है। तथा हमारे दिमाग का 75% हिस्सा पानी है।

हरे पेड़ों में पानी की मात्रा 75% होती है।

बिना खाए हम एक महीने तक ज़िंदा रह सकते हैं लेकिन बिना पानी के सिर्फ छह-सात दिन।

बोतलबंद पानी नगर निगम के पानी से करीब डेढ़ हज़ार गुना महँगा होता है। हालाँकि फिर भी वह सुरक्षित हो इसकी कोई गारंटी नहीं।

पृथ्वी के 75% भाग पर पानी है।

पृथ्वी के कुल पानी का 75% पानी समुद्रों में होता है।

विश्व का 75% पानी ध्रुवों पर बर्फ की शक्ल में जम जाता है।

हर साल लगभग 1150 घन किलोमीटर बारिश का पानी समुद्रों में मिल जाता है।

अगर एक नल से एक सेकेण्ड में एक बूँद पानी टपके तो दिन भर में सत्रह लीटर और साल भर में उससे लगभग तेरह हज़ार लीटर पानी बह जाएगा।

सिंचाई के अनेक साधनों के बावजूद 60% अनाजों का उत्पादन भूमिगत जल से होता है।

एक लघुकथा

गधा चाहता है

एक बाप और एक बेटा अपने गधे के साथ शहर जा रहे थे।

रास्ते में दो मुसाफिर मिले। इन्हें देखकर एक मुसाफिर दूसरे से बोला- "देख! कैसे मूर्ख लोग हैं। पास में गधा होते हुए भी पैदल जा रहे हैं। उस पर बैठकर नहीं जा सकते?"

मुसाफिरों की बात सुन बाप और बेटा दोनों गधे पर बैठ गए। कुछ देर बाद फिर दो मुसाफिर मिले। एक ने दूसरे ने कहा- "इन लोगों में ज़रा भी दया-माया नहीं है। दोनों के दोनों बेचारे जीव पर चढ़ बैठे। देखना कुछ देर बाद गधा टें ही बोल जाएगा।"

मुसाफिरों की बात सुनकर बाप गधे से उतरकर पैदल चलने लगा। बेटे को गधे पर बैठे रहने दिया।





कुछ दूर चलने पर फिर दो मुसाफिर मिले। इन्हें देख एक मुसाफिर दूसरे से बोला- "आजकल शर्म-लिहाज़ तो कुछ रह ही नहीं गया है। बूढ़ा बाप बेचारा पैदल घिसट रहा है और जवान मुस्टंडा बेटा ठाठ से गधे की सवारी कर रहा है।"

मुसाफिरों की बात सुनकर बेटा गधे से उतर पैदल चलने लगा और बाप को उसने जिद करके गधे पर बैठा दिया।

कुछ दूर चलने पर फिर दो मुसाफिर मिले।

इन्हें देखकर एक मुसाफिर दूसरे से बोला- "क्या ज़माना आया है। बेचारा बच्चा पैदल चल रहा है और बाप आराम से गधे पर सवार है। यह भी नहीं सोचता कि बेचारे बच्चे के पैरों में छाले पड़ जाएंगे।"

मुसाफिरों की बात सुनकर बेटा उतर गया।

दोनों कुछ देर सोचते रहे। फिर दोनों ने मिलकर किसी तरह गधे को सिर पर उठा लिया और चलने लगे।



कुछ दूर चलने पर फिर दो मुसाफिर मिले। वे बोले कुछ नहीं, सिर्फ आश्चर्य से आँखें फाड़े इन्हें देखते रहे।

गधे को ढोना आसान नहीं था। कुछ देर बाद गधे को पटककर दोनों ज़मीन पर बैठ गए और पसीना सुखाने लगे।

उन्हें कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि करें तो क्या करें।

तभी उन्हें किसी के हँसने की आवाज़ सुनाई दी। उन्होंने चारों तरफ देखा। आसपास तो कोई भी नहीं था।

उन्होंने ध्यान से देखा तो पाया कि गधा ही हँस रहा है।



बाप ने गधे के कान के पास मुँह ले जाकर पूछा- "क्या बात है? क्यों हँस रहे हो?"

गधा गंभीर होकर बोला- "लोग तो कुछ न कुछ हर हाल में कहेंगे ही। लोगों की परवाह करना छोड़ो और कुछ दूर बारी-बारी दोनों सवारी करो। कोई कुछ कहे तो कहना - हमारा गधा ऐसा ही चाहता है।"

सभी चित्र- सतीश ढोके



इंद्रियाँ कितनी

इन्द्रियाँ कितनी होती हैं? ..... पाँच!

क्या इन्द्रियाँ सचमुच पाँच होती हैं?

आइए देखें, आज के वैज्ञानिक इस बारे में क्या सोचते हैं।

इन्द्रियाँ क्या हैं?

हमें अपने आसपास की दुनिया का पता कैसे चलता है?

देखकर	-	देखनेवाली इन्द्रिय	-	आँख
सुनकर	-	सुननेवाली इन्द्रिय	-	कान
सूँघकर	-	सूँघनेवाली इन्द्रिय	-	नाक
छूकर	-	छूनेवाली इन्द्रिय	-	त्वचा
चखकर	-	चखनेवाली इन्द्रिय	-	जीभ

लेकिन क्या बात यहीं खत्म हो जाती है?

यदि आँख का काम सिर्फ देखना है तो आँख को यह कैसे पता चलता है कि दिखाई दे रही चीज़ दूर है या पास? गहरी है या उथली? नरम है या कठोर?

यदि त्वचा का काम सिर्फ छूना है तो यह कैसे पता चलता है कि जिस चीज़ को छुआ जा रहा है वह गरम है या ठण्डी? पानी छूते ही हाथ की त्वचा को पता चल जाता है कि पानी गरम है या ठण्डा या गुनगुना। क्या छूने की परिभाषा में तापमान जानना भी शामिल है?

यदि कान का काम सिर्फ सुनना है तो शोरगुल और भीड़भाड़ के बीच भी हम अपने परिचित की आवाज़ कैसे पहचान लेते हैं? अनेक बच्चे रो रहे हों तो उनके बीच भी माँ तुरंत पहचान लेती है कि उसका बच्चा रो रहा है या नहीं। और कदमों की आहट से भी तो हम पहचान लेते हैं कि कौन आया होगा? घर के बाहर से अनेक स्कूटर गुज़रते होंगे लेकिन किसी एक आवाज को सुनकर बच्चे तुरंत पहचान जाते हैं - पापा का स्कूटर आया।

कैसे? क्या कान के पास दिमाग भी होता है?

एक चीज़ और तुमने देखी होगी। टेढ़ी-मेढ़ी ज़मीन पर पाँव पड़ जाए तो हम लड़खड़ा जाते हैं। लेकिन हर बार लड़खड़ाने पर हाथ फैलाकर, शरीर का वज़न दूसरे पैर पर डालकर या किसी और तरह शरीर का संतुलन बनाकर हम सम्भल जाते हैं। ऐसा कभी-कभी हो जाता है कि हम लड़खड़ाने के बाद सम्भल नहीं पाते और गिर जाते हैं।

संतुलन साधने का यही कमाल हमें रस्सी पर चलने वाले नटों में और एक झूले से दूसरे झूले पर हवा में जानेवाले, या एक पहिए की साइकिल चलानेवाले या सिर पर एक के ऊपर एक पंद्रह बीस मटके या गिलास उठाने वाले सर्कस कलाकारों में भी देखने को मिलता है।

तो वह कौन-सी इन्द्रिय है जो हमें संतुलन की समझ और क्षमता देती है?

अब तक जो कहा गया उससे दो नतीज़े निकलते हैं-

1.इन्द्रियाँ पाँच से कहीं ज्यादा हैं।

2.. इन्द्रियों के काम सिर्फ वही नहीं जो अब

तक हम समझते आए हैं, बल्कि उससे भी अधिक हैं।

आइए देखें, वैज्ञानिकों ने लम्बी खोज के बाद इन्द्रियों के बारे में क्या पता लगाया है।

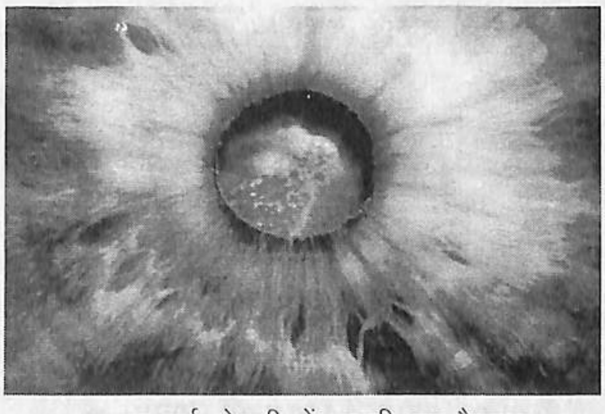


आंख

आँख हमारी एक अत्यंत संवेदनशील इन्द्रिय है। वैज्ञानिकों का कहना है कि आँख रात के समय 30 किलोमीटर दूर जलती टॉर्च की रोशनी को भी देख सकती है।

तेज़ रोशनी में आँख चकाचौंध हो जाती है। इसका मतलब क्या है? इसका मतलब यह है कि तेज़ रोशनी पड़ते ही आँख का रंगीन भाग जिसे आइरिस कहते हैं पल भर को बन्द हो जाता है और इससे पुतली सिकुड़ जाती है। इसका उल्टा भी होता है। अर्थात् जब हम अँधेरे में प्रवेश करते हैं तो हमारी आइरिस ज़्यादा खुल जाती है ताकि ज़्यादा रोशनी आँखों के भीतर प्रवेश कर सके।

आँख के पिछले भाग रेटीना में संवेदना संग्राहक (सेन्स रिसेप्टर) होते हैं जो सीधे दिमाग से जुड़े होते हैं। यही दिमाग को वस्तुओं की गहराई, रंग, खुरदरेपन, गतिशीलता आदि की सूचना देते हैं।



कम हुई रोशनी में पुतली का फैलना

यह अन्तर संवेदन संग्राहकों के कारण ही होता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि अकेली आँख छह इंद्रियों के बराबर है।

कान

दोनों कानों को हाथों से कसकर बन्द कर लो और अब दाँत पीसो। दाँत पीसने की आवाज़ सुनाई देती है? कान बन्द करके जोर-जोर से साँस लो। कैसी आवाज़ सुनाई देती है? कानों को बन्द करके एक उंगली से त्वचा पर खुजली चलाओ। कैसी आवाज़ आती है?



धीमी फुसफुसाहट या मच्छर-मक्खी, भँवरे, बर्र की आवाज़ से लगाकर इससे दो हज़ार गुनी ऊँची आवाज़ को भी हमारे कान साफ सुन सकते हैं।

कानों की पहचानने और याद रखने की क्षमता भी बहुत तगड़ी होती है। चालीस-पचास बच्चों की कक्षा में अनुभवी अध्यापक तुरंत भाँप जाते हैं कि कौन हँसा। या कौन आपस में बातें कर रहा है। इसका कारण भी यही है कि कान की शिराएँ भी दिमाग से जुड़ी रहती है। मान लीजिए, टेलीफोन लाइन खराब है। और आपके पास फोन आता है -

मैं पिता—बोल—हूँ। ला—सब—है। कल—सुबह—डी से—गा। फिर—लाऊँगा कि—हाँ—क्या—था।

इस बातचीत में बारह शब्द गायब हैं। लेकिन

तुम थोड़ा ध्यान से सुनो तो इसका पूरा अर्थ समझ सकते हो। कैसे?

नाक

नाक भी अत्यंत संवेदनशील इन्द्रिय है। नाक के भीतर केमोरिसेप्टर्स होते हैं जिनकी बदौलत हम चार हज़ार प्रकार की गंधों की अलग-अलग पहचान कर सकते हैं। हम अपनी पसंदीदा सुगंध के फूलों वाले पौधे अपने आसपास लगाते हैं। इत्र उद्योग पुराने समय से संसार का एक महत्वपूर्ण उद्योग रहा है। अनेक लोग सुगंध से रोगों की चिकित्सा करने का भी दावा करते हैं। इसे आरोमा थैरेपी कहते हैं। यह आजकल बहुत फैशन में है। खैर... इलाज़ हो न हो, यह तो तुमने भी देखा होगा कि सुंगधित वातावरण में मन प्रसन्न रहता है। और इसका उल्टा भी सच है। मान लो गणित की कक्षा चल रही है और पास ही कहीं कोई कुत्ता मर गया है या चूहा मर गया है और उसकी दुर्गन्ध आ रही है क्या ऐसे में गणित पढ़ने में मन लगेगा?



लेकिन चार हज़ार प्रकार की गंध भाँप लेनेवाले मनुष्य इस मामले में पशुओं से कहीं पीछे हैं। एक साधारण कुत्ते की सूँघने की क्षमता मनुष्य की तुलना में एक लाख गुना ज़्यादा होती है। इसीलिए पुलिस में खोजी कुत्ते रखे जाते हैं।

त्वचा

हमारी त्वचा हमें खोलबन्द रखने के अलावा और भी कई ज़रूरी काम करती है। त्वचा पर लाखों संवेदन संग्राहक होते हैं। कुछ दबाव महसूस करने के लिए, कुछ दर्द महसूस करने के लिए और कुछ



तापमान को महसूस करने के लिए। संवेदन संग्राहक सबसे अधिक होते हैं उंगलियों के पोरों में। यदि तुम अपनी किसी उंगली पर एक डाक टिकट चिपका लो तो उसके नीचे 800 संवेदन संग्राहक दब जाएँगे।

जीभ

अब रही जीभ!

तो खट्टा-मीठा, फीका-कड़वा, कसैला, चरपरा स्वाद तो जीभ झट पहचान लेती है।

और ठंडा-गरम गुनगुना भी।



और?

जीभ पर जो छोटे-छोटे दाने होते हैं, दरअसल वे केमोरिसेप्टर्स होते हैं जिन्हें स्वादतंतु या टेस्ट बड्स कहा जाता है। तुम्हें जानकर तज्जुब होगा कि हमारी छोटी-सी जीभ पर तीन हज़ार के करीब स्वाद तंतु होते हैं।

तो ...? इंद्रियाँ (संवेदना संग्राहक) कितनी?

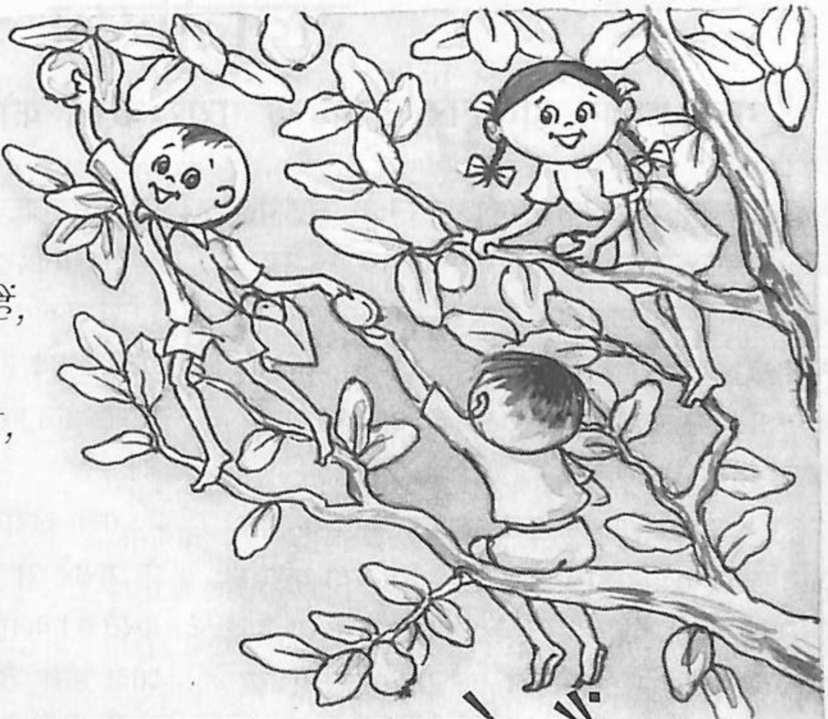
कम से कम चार तरह के संवेदना संग्राहक (इंद्रियाँ) आँख में! कम से कम पाँच कान में।

कम से कम चार जीभ पर! एक त्वचा में।

एक नाक में और एक माँसपेशियों में!

कितने हुए? सोलह...?

वैज्ञानिक कहते हैं इससे भी ज्यादा! ●



ऐसे दोस्त कहाँ मिलते हैं,
जो पेड़ों पर चढ़ते हैं।
वे सारे अमरूद गिराकर,
खाते और झगड़ते हैं।

दोस्त बनाना पड़ते हैं



ऐसे दोस्त कहाँ रहते हैं,
नया चुटकुला गढ़ते हैं।
हँसते और हँसाते हमको,
मिलकर आगे बढ़ते हैं।



ऐसे दोस्त कहाँ ढूँढें जो,
नहीं किसी से लड़ते हैं।
बना-बनाया सब मिल जाता
दोस्त बनाना पड़ते हैं।

- ध्रुव शुक्ल

चित्र- विवेक वर्मा

सवालीराम

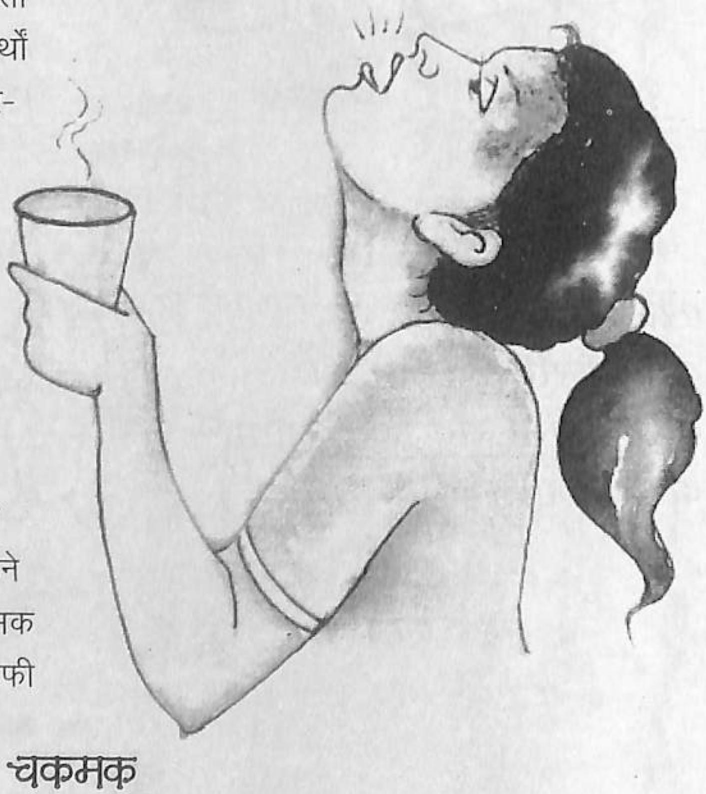
गला खराब होने पर नमक के गरारे करने को क्यों कहा जाता है?

नमक की ज़रूरत को जानने के लिए यह जानना ज़रूरी है कि गला खराब होने पर क्या-क्या होता है। गला खराब होने का मतलब अक्सर गले में दर्द होना या खुजली जैसा होना, गले में बलगम जम जाना और गले की आवाज़ बदल जाना माना जाता है।

अक्सर धूल या परागकण इत्यादि के प्रति अति संवेदनशील होने से शरीर प्रतिक्रिया करता है; यही गला खराब होने के रूप में उभरता है। इन तमाम परिस्थितियों का गले पर असर पड़ता है। हमारी श्वास नली व ग्रास नली के अंदर एक लिसलिसा पदार्थ हमेशा स्रावित होता रहता है। यह एक तो नलियों में से गुज़रने वाले पदार्थों के आवागमन को सुगम बना देता है। साथ ही इसमें कुछ ऐसी प्रतिरक्षात्मक कोशिकाएँ भी होती हैं जो गले में से गुज़रने वाले पदार्थों की छानबीन करती रहती हैं। अगर ये कोशिकाएँ नुकसानदेह पदार्थों को नष्ट करने में जुट जाएँ तो यह पदार्थ धीरे-धीरे गाढ़ा होता जाता है। इसमें मृत कोशिकाएँ, रोगाणु तथा नुकसानदेह पदार्थ काफी मात्रा में होता है। गाढ़ी अवस्था में हम इसे बलगम कहते हैं। यह अगर गले में जम जाए तो गला खराब हो जाता है।

संक्रमण के कारण कई बार लिसलिसे पदार्थ वाली परत तथा इसके ठीक नीचे की परत में घाव भी बन जाते हैं। इससे भी गला खराब हो सकता है। गले में रोगाणुओं से लड़ने के लिए और भी योद्धा हैं, उनमें से टॉन्सिल नामक ग्रन्थि काफी महत्वपूर्ण है। यहाँ पर भी काफी प्रतिरक्षात्मक कोशिकाएँ बनती हैं। किसी परिस्थिति में नुकसानदेह बाहरी पदार्थों से लड़ना पड़े तो यह ग्रन्थि फूलकर बड़ी हो जाती है। इस कारण से गले में दर्द होता है या खुजाल चलने लगती है। मगर ध्यान रहे कि ग्रन्थि हमारी रक्षा के लिए फूली है।

गला खराब होने के कारणों के बाद अब नमक के गरारे से क्या मदद मिलती है, इसकी बात करते हैं। बलगम दरअसल कई पदार्थों का कोलाइड घोल होता है। ऐसे घोल में फिटकरी या नमक जैसी चीज़ें मिलाएँ तो विभिन्न हिस्सों में टूट जाते हैं। और ये पदार्थ गले में न टिके रहकर या तो खखार के साथ बाहर निकल जाते हैं या थूक के साथ निगल लिए जाते हैं। ●





हमारे हाथ-पैरों में झुनझुनी क्यों होती है?

शरीर के किसी भी हिस्से में अगर खून का बहना कुछ समय रुककर फिर शुरू हो जाए तो एक अजीब सा एहसास होता है। ऐसा लगता है जैसे शरीर के अंदर बहुत सी पिनें कोई एक साथ हल्के-हल्के चुभा रहा है। उदाहरण के लिए अगर कोई व्यक्ति अपनी टाँग मोड़कर एक ही स्थिति में बहुत देर बैठा रहे और फिर खड़े होने की कोशिश करे तो कुछ देर तक उस व्यक्ति को महसूस होगा कि उसका पैर सो गया है। जैसे ही खून बहना शुरू होगा तो पैर में वही जानी पहचानी सुइयों की सी चुभन महसूस होगी। आखिर क्यों होता है यह एहसास?

शरीर के किसी हिस्से में धमनियों पर बहुत देर तक दबाव पड़ने से खून का बहना कम हो जाता है या रुक जाता है। इससे उस हिस्से की तंत्रिकाओं की काम करने की क्षमता भी कम हो जाती है। यही वजह है कि उस हिस्से से दिमाग तक संदेश पहुँचने बंद हो जाते हैं। उस हिस्से पर दिमाग का नियंत्रण भी कम हो जाता है। जब शरीर के उस हिस्से पर से दबाव कम हो जाता है तो खून का प्रवाह सामान्य होने लगता है। अब वहाँ की तंत्रिकाएँ एक बार फिर संदेश भेजने लगती हैं। तब शुरू में हमें सुई चुभने जैसी सनसनाहट का एहसास होता है। ●

अध्यापक- *मैंने चोरी की* इसका भविष्यफल बताओ।

पप्पू- आप ज़रूर जेल जाएँगे।

●

पप्पू- पापा, आज मैंने एक हाथी को कपड़े पहनते हुए देखा।

पापा- क्या बकवास करते हो। ऐसा कैसे हो सकता है?

पप्पू- क्यों नहीं हो सकता? मैं कपड़े पहन रहा था। खिड़की से बाहर देखा तो एक हाथी जा रहा था।



अध्यापक- बगुला एक टाँग पर क्यों खड़ा होता है?

पप्पू- दूसरी भी उठा लेगा तो मुँह के बल जो गिरेगा।

●

प्रो. वर्मा- ए लड़के तुम बार-बार पीछे पलट कर क्यों देख रहे हो। कहीं नकल...

रवि- नहीं सर, पर्चे में ही लिखा है पलट कर देखें।

लाखों का स्वामी

एक लड़का कूएं में कूदकर आत्महत्या करने जा रहा था।

तभी एक साधु उधर से गुज़रा।

साधु ने पूछा- "क्या बात है? अपनी जान लेने पर क्यों उतारू हो?"

लड़के ने कहा- "क्या करूँ? मैं जीवन से बिल्कुल निराश हो चुका हूँ। माँ-बाप हैं नहीं। परीक्षा में फेल हो गया तो काका ने घर से निकाल दिया। पास में फूटी कौड़ी भी नहीं है। जीकर में क्या करूँगा?"



साधु ने कहा- "सच बात है। जब पास कुछ न हो तो मरना ही ठीक है।" साधु चल पड़ा।

कुछ दूर जाकर साधु रुका और पीछे मुड़कर बोला- "तुम्हारे पास एक लाख रुपए होते तब भी क्या तुम अपनी जान लेते?"

लड़के ने कहा- "तब मैं ऐसा क्यों करता? ठाठ से गुड़-चने की दुकान ही खोलकर बैठ जाता।"

साधु ने कहा- "तो मेरे साथ चलो। बीस कोस उत्तर में एक राजा रहता है। वह तुम्हें एक लाख रुपए दे देगा। बस शर्त यह है कि बदले में वह छुरी से तुम्हारी एक आँख निकाल लेगा।"

लड़का बोला- "आँख! अपनी आँख मैं क्यों निकालने दूँगा?"

साधु बोला- "तो रहने दो। अच्छा चलो, इधर चलते हैं। बीस कोस दक्षिण में एक राजा रहता है। वह कुल्हाड़ी से तुम्हारा दाहिना या बांया, जो तुम चाहो एक हाथ काट लेगा और बदले में तुरंत एक लाख रुपए दे देगा।"

लड़के ने कहा- "मुझे क्या पागल समझ रखा है जो उसे अपना एक हाथ काटने दूँगा?"

साधु ने कहा- "चलो छोड़ो। तुम्हारी इच्छा नहीं है तो मुझे क्या। पर एक काम करो। मेरे साथ चलो। बीस कोस पूरब में भी एक दयालु राजा रहता है। वह भी तुम्हें एक लाख रुपए दे सकता है। मेरे कहने से तो दे ही देगा। और वह इतना दयालु है कि तुम्हें हाथ भी नहीं लगाएगा। सिर्फ उसके दो नौकर तुम्हें बाँधकर कुछ देर के लिए ज़मीन पर पटक देंगे और एक आरे से तुम्हारी दाहिनी या बाँई टाँग - जो तुम चाहो - काट लेंगे।"



लड़के ने कहा- "मुझे तो लगता है आप खुद ही पागल हैं। या सुबह-सुबह मुझ दुखी का मज़ाक उड़ा रहे हैं।"

साधु ने कहा- "जाने दो भाई। तुम्हें बुरा लगा हो तो क्षमा कर देना। मुझे दुख है कि मैं तुम्हारे किसी काम न सका। लगता है तुम्हारे लिए कूएँ में डूबकर मरना ही सबसे ठीक रहेगा। मैं जाता हूँ। तुम आराम से कूदना, पर एक बात ध्यान रखना, तुम्हारे साथ तुम्हारे लाखों रुपए भी कुएँ में डूब जाएँगे।"

इतना कहकर साधु चला गया।

सभी चित्र- विवेक वर्मा

अपनी प्रयोगशाला...

जोर लगा के...

ज़रूरत की चीज़ें

बाँस के दो डण्डे और रस्सी

चित्र में दिखाए तरीके से रस्सी को इन डण्डों पर लपेट लो। अब अपने दो दोस्तों से कहो कि वे इन दोनों डण्डों को अपनी-अपनी ओर खींचें। तुम रस्सी का एक छोर थाम लो।

बस ज़रा-सी ताकत से तुम रस्सी को पकड़े होगे।

इस खेल का कमाल तो तुम्हें तब पता चलेगा जब तुम इसे करके देखोगे।

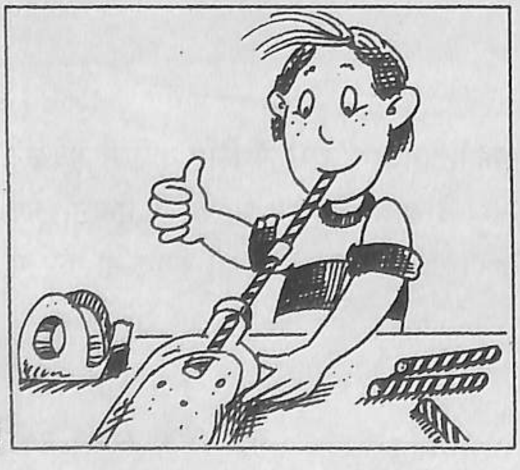
तुम्हें क्या लगता है? क्या तुम्हारे दोस्त इस तरह दो डण्डों को खींचकर तुम्हारी रस्सी खींच पाएँगे? चलो ज़रा करके देखो।



मिले जो नली-नली

बोतल में शरबत पीने वाली एक नली डालकर पानी पिओ।





अब इस नली के एक सिरे पर एक और नली जोड़ लो, टेप लगाकर।

अब पानी खींचकर देखो।

अब एक तीसरी नली भी लगाओ।

क्या पानी पीना पहले की तरह आसान रहा है?

इस तरह नलियाँ जोड़ते रहो।





तुम कितनी नलियाँ और जोड़कर भी पानी पी सकते हो?

ऐसा क्यों होता है?

ज़ोर लगा के...

एल्यूमिनियम का एक डिब्बा लो।

इसमें मुँह से थोड़ा नीचे तीन छेद कर लो। हाँ ध्यान रखना कि ये छेद किनार से निचाई पर हों।

अब इनसे तीन रस्सियाँ बाँध लो।

बाँधना तो तुम जानते ही हो (एक सिरा छेद में पिरोकर अंदर की तरफ एक गठान लगाना।)

अब इन तीनों रस्सियों के सिरों को एक और रस्सी से बाँध देना।



अब इस डिब्बे में चित्रानुसार एक के बाद एक पाँच छेद कर लो।

और बस एक शाखा या किसी और चीज़ से लटका दो।

अब इसमें पानी डालना है। पानी डालते ही यह डिब्बा कुछ मज़ेदार हरकत करेगा। क्या होगा यह तो तुम करके देखोगे ही। ये भी सोचना कि ऐसा क्यों होता है?

हुआ यूँ कि...

मक़बूल फ़िदा हुसैन हमारे देश के एक बहुत बड़े और मशहूर चित्रकार हैं। पिछले दिनों उनकी आत्मकथा बहुत सुंदर ढंग से छपकर आई है। उसी का एक अंश इस बार हम तुम्हारे लिए लाए हैं...



माँ



मकबूल की माँ क्यों अपनी कोई निशानी नहीं छोड़ गई? क्या बेटे को इस दुनिया में छोड़ जाना ही काफी समझा? क्यों बाप के जूतों में खड़ा कर उसे आँसू भरी आँखों से देखा करती? कितनी तमन्नाएँ होंगी? सब अपने साथ ले गई।

बेटा आज भी जहाँ, कोई मराठी साड़ी इधर-उधर पड़ी नज़र आए, तो उसकी हज़ारों तहों में माँ को ढूँढने लगता है। ढूँढता है वह माँ का चेहरा, जिस की दो आँखों में न मालूम कितने ख्वाब डूबे। ढूँढता है वह साँस जिसमें बच्चे के सारे बदन की भीनी खुशबू खिंच कर कलेजे के अन्दर समा गई और बाहर न निकल सकी। कहाँ हैं वह होंठ? वह माँ की मोहब्बत का ज्वालामुखी? वह ममता के जिसके हर पोर से उबलता बेपनाह प्यार का लावा, शायद लड़के की यही अंदरूनी कराहती चिंगारी दरबदर मारी मारी फिर रही है। दुनिया का कोना कोना छान मारा, जंगल बयाबाँ के नक्श को कुरेदा।

यही कराहती चिन्गारी इंसानी तहज़ीब की गुफाओं में गई। जमाले अजन्ता की अप्सराओं से मिली। मोहनजोदड़ो की ज़मीन में दफन टूटे बरतनों को टटोला। करबला की तपती रेत पर उँगली से 'इब्नेजैनब' लिखा। नमरुद की नेफरीती से पूछा। डिमेलो की 'वीनस'; माइकलएंजेलो की 'पीयेता' लियोनार्दो दा विंची की 'मोनालिसा' यहाँ तक कि पिकासो की 'मादमोज़ेल द आविन्यों' से मिलने में नहीं घबराई। आर्ट की तारीख में कई पेन्टर्स ने अपनी

माँ को कैनवस और कागज़ पर चित्रित करके, अमर ज़िन्दगी से परे, एक ऐसी आत्मा की परछाईं के वजूद को मनवाया जो सारी सृष्टि का सार है। खुदा की रचना का तन्हा राज़।

विसलर ने अपनी माँ का, कमरे के कोने में काला लिबास पहने खामोश रात के रंग में, पोर्टेट पेन्ट किया। रेमब्राँ ने हाथ में चिराग उठाए एक औरत की पेन्टिंग बनाई, जो उसके बेटे की माँ बनी। वेनगो ज़रूर अपनी माँ को उस दहकते सूरजमुखी के खेत में बिठा कर बेशुमार पोर्टेट बनाता मगर क्या करे, लोगों ने उसे दीवाना ठहराकर पागलखाने में बंद कर दिया।

आखिर यह बिना माँ का बच्चा मकबूल क्या करे, माँ की शक्ल ही याद नहीं। कुदरत का यह क्रूर मज़ाक देखिए कि डेढ़ बरस की उमर तक बच्चा जब माँ को ठीक से पहचानने लगे तो उसी वक्त माँ की मौत हो जाए और फिर बच्चे की आँखों से माँ के सारे नकूश मिट जाएँ।



वह आधी रात गए माँ के लड़खड़ाते कदम कहाँ गए, जिन्हें अपने बीमार बच्चे के बिस्तर के चारों तरफ सात चक्कर लगाने के लिए उठाए। वह हाथ कहाँ गए जो दुआ के लिए उठे कि उसकी उमर बेटे को लग जाए।

सन 1979 के करीब कलकत्ता की एक मद्धम रोशनी वाली गली में एक बुजुर्ग औरत सफेद साड़ी पहने बड़ी विनम्रता से पैदल जा रही है। पैर में रबर की चप्पल, बगल में छोटे मूठ की छतरी मामूली सी। गर्दन झुकी साथ दो चार औरतें, दो की गोद में दूध पीते बच्चे, लेकिन औरतें माँ नहीं लगतीं। सब की साड़ियाँ सफेद। सिर ढँके। पूरी आस्तीन का कमर तक ब्लाउज़। बुजुर्ग औरत गली कूचों में रुक रुक कर औरतों, बच्चों से नरम लहजे में बातचीत बंगला ज़बान में करती, जो उसकी मातृभाषा नहीं।

मकबूल भी वहीं कहीं गलियों में, स्केच बुक बगल में दबाए गुज़र रहा था। इस फरिश्तानुमा बुजुर्ग औरत को दूर से देखा, आहिस्ता आहिस्ता उनके पीछे चलना शुरू किया। चलता ही रहा महीनों चलता रहा। कलकत्ता की तमाम गुमनाम बस्तियों को पहचाना, दुखी औरतें, अनाथ बच्चे, बेघर बर्तन, थके मुर्दा जिस्मों को उठाए चारपाइयाँ।

एक फटी पुरानी साड़ी हवा के झोंके से रेंगती मकबूल के पैरों में जा उलझती है। साड़ी बहुत पुरानी शायद साठ सत्तर साल पुरानी। जाने किन किन औरतों ने अपने जिस्म पर डाला हो। हो सकता है पंढरपुर में खरीदी गई हो, इंदौर की नदी किनारे लहराई हो। किस किस धोबी घाट पर धुली, कहीं फटी कहीं सिली। आखिर खैरात में गरीबों में बाँट दी गई। एक गरीब बच्चे की माँ जिसका दूध सूख गया है, एक रात अपने बिलबिलाते बच्चे के गले में दो घूँट दूध उतारने के

ली गई।

दादा की उँगली पकड़े एक लड़का

एक लड़का दुबला पतला अपने दादा अब्दुल की उँगली पकड़े चल रहा है। इंदौर की कच्ची सड़क पर कल्लू मियाँ का ताँगा रेंगता दिखाई देता है। शाम के चार बजे हैं, दिन ज़रा थक कर ठहरा सा लगता है। दादा अब्दुल अकसर अपने मोहल्ले के नालबन्द अच्छन मियाँ की दुकान पर जा बैठते। अच्छन मियाँ नाल खोलते कोयले से उतारकर चाय का पानी चढ़ा देते। लड़का दहकते कोयलों पर नाल का सुर्ख रंग राख में बदलते देखकर अपने दादा की भूरी अचकन में मुँह छुपा लेता। घोड़े के खुर से छिले हुए सफेद टुकड़े काली मिट्टी पर इस तरह छा जाते जैसे, खोपरे की खुरचन।

अच्छन मियाँ उबलती हुई चाय मिट्टी के सकोरे में उंडेलते हुए हमारे दादा से कहने लगे- 'भई, अब्दुल, आजकल नालबन्दी का काम कुछ ठण्डा चल रहा है। रेज़ीडेन्ट साहब के नाज़िर को ही ले





लिए वह फटी साड़ी पचास पैसे में कलकत्ता के चोर बाज़ार मे पुराने कपड़े वाले के यहाँ बेच आती है।

कलकत्ता। 1980, दिसम्बर का महीना, चौरंगी रोड पर आलीशान टाटा सेंटर। एम.एफ. हुसैन की नुमाइश की शुरूआत। रंग बिंरगी साड़ियों में सजी बंगाली महिलाएँ, बिहारी बेग़मात, पंजाबी तमतड़ाक की एक जमा भीड़।

तमाम पेन्टिंग्स में बार-बार सिर्फ एक सफेद साड़ी, सियाह बैकग्राउण्ड पर दिखाई देती। इन साड़ियों की सिलवटों में छुपे, ढँके, इधर-उधर, छोटे-छोटे यतीम बच्चों की झलक। सफेद साड़ी में कोई इंसानी जिस्म नहीं, किसी माँ का चेहरा नहीं। साड़ी के बार्डर पर नीले रंग की दो धारियाँ। यह दुनिया की एक मशहूर देवी स्वरूप मदर टिरेसा। जिनकी पहचान चेहरा नहीं उनकी बेपनाह मोहब्बत है, उन बच्चों के लिए जिनसे माँ की मोहब्बत छीन



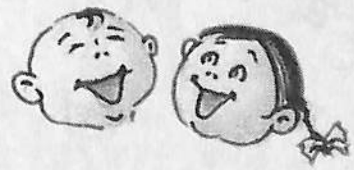
लीजिए, कहाँ गईं उन की वह बग्घियाँ, दर्जन घोड़े, अब तो सुना है दो-दो मोटर गाड़ियाँ हैं।' अब्दुल ने जवाब में कहा- 'हाँ, अब यह गोरे लोग न मालूम इस देश में कितनी धूल उड़ाएँगे।'

उधर नालबन्द अच्छन मियाँ का हथौड़ा उठा, ठका-ठक इधर लड़के के दादा ने अपनी अचकन झटकी और घर की तरफ खड़े हुए। लड़का हैरान कि यह गोरा कौन? कोयले का कालापन क्या? घोड़े की टाप क्या? और मोटर की पों पों क्यों?

कोई जान न पहचान बिल्कुल गुमनाम। बाप इंदौर की मालवा टैक्सटाइल मिल के टाइमकीपर और एकाउन्टेण्ट।

लड़के के घरवालों उनके नाम, रिश्ते, हुलिया और मिज़ाज से पहचान हो जाए तो उसके माहौल का अन्दाज़ा हो जाएगा, जहाँ लड़का पला बढ़ा। जब परवान चढ़ने का वक्त आता है, तब कैसे ज़मीन आसमान के बीच के फासले उस लड़के पर असर करते हैं, हरकत की रफ्तार तय करते हैं। उसने चार दीवारी के घिराव से अपने आप को बाहर रखा और दुनिया की समझ ज्योमेट्री से नहीं बूझी।●

अध्यापक- श्याम, कल मैंने कक्षा में भूतकाल के बारे में बताया था। अब तुम एक भूतकाल का वाक्य बताओ।
श्याम- सर, *मैं कल कक्षा में नहीं आया था।*
अध्यापक- शाबाश। बैठ जाओ।

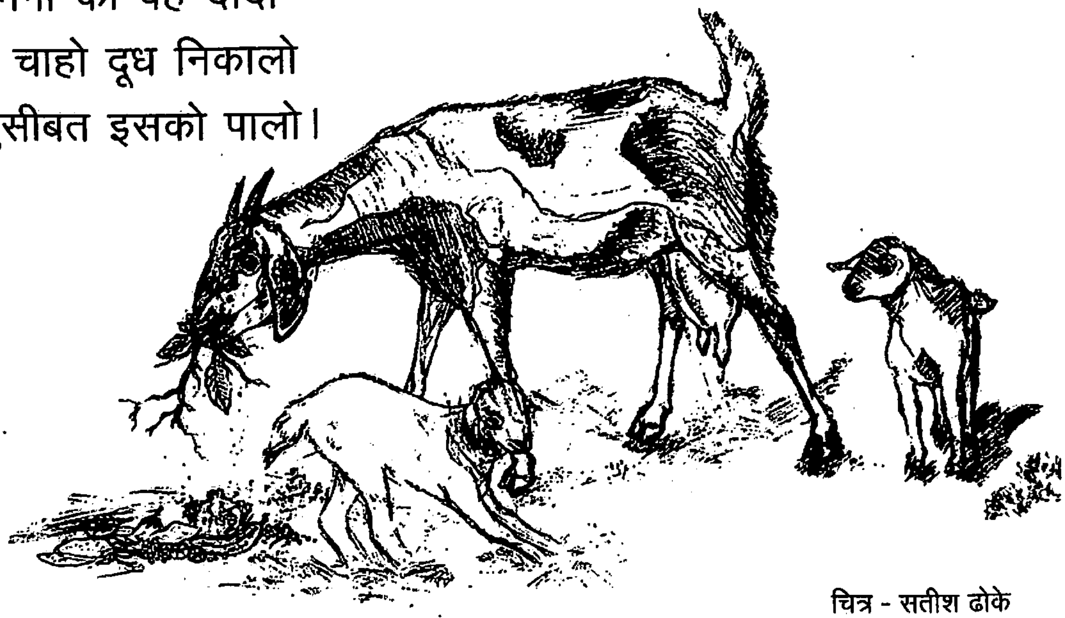


चिंटू- माँ, आज मुझे मास्टरजी ने मारा।
माँ- तुमने ज़रूर कोई शरारत की होगी।
चिंटू- नहीं माँ! मैं शरारत कैसे करता। मैं तो सो रहा था।

मेरी बकरी

गिरिजा कुलश्रेष्ठ

मेरी बकरी
है चितबकरी
लेकिन थोड़ी-सी है बहरी
कोई भी कुछ उसे सिखाए
वह बस मैं.. मैं... पर ठहरी
मेरी बकरी
चटपट चबरी
खाने में पूरी बेसबरी
दिनभर मुँह चलाती रहती
अचरा-कचरा सब खा जाती
सब्ज़ी, भाजी, चना चपाती
जहाँ तहाँ मैंगनी गिराती
मेरी बकरी
बड़ी गुनहरी
भोली-भाली सीधी सादी
तीस मेमनों की वह दादी
जब भी चाहो दूध निकालो
बिना मुसीबत इसको पालो।



चित्र - सतीश ढोके



सोनम रायकवार, सातवीं, उज्जैन, म.प्र.



सन्मुख शिवड़ेकर, तीसरी, महू, म.प्र.



छाता है तो फिर क्या डर



जाएँ तो जाएँ कहाँ

बारिश और बच्चे



पानी पर पानी लिखना



जब साइकिल निकल गई
तो मेरी जीप भी निकल ही जाएगी



ठाठ से मिल बाँट के

साभार - हिन्दुस्तान टाइम्स
एवं विवेक पटेरिया



गरज बरस प्यासी धरती को...



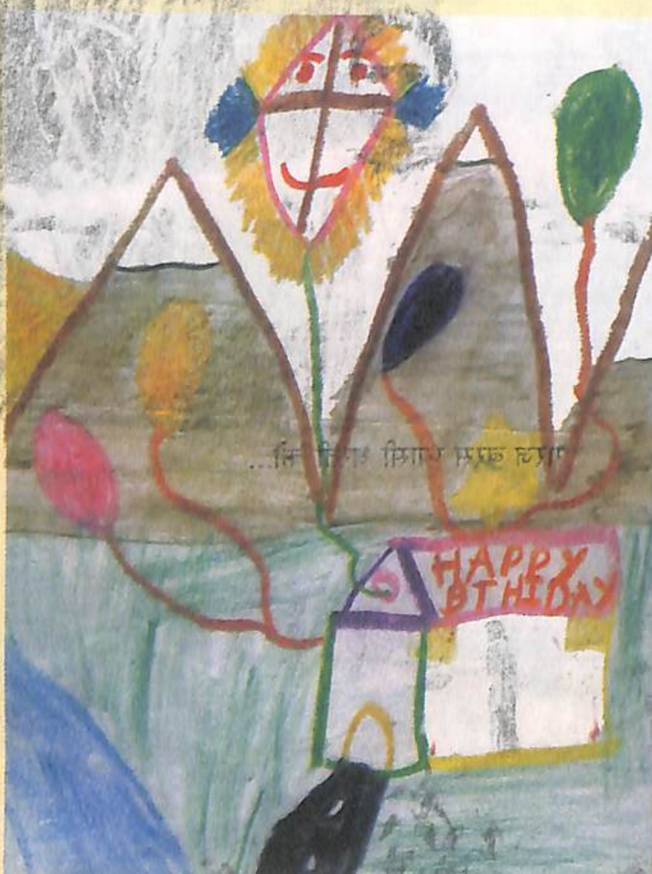
छई छपा छई छपाक छई...



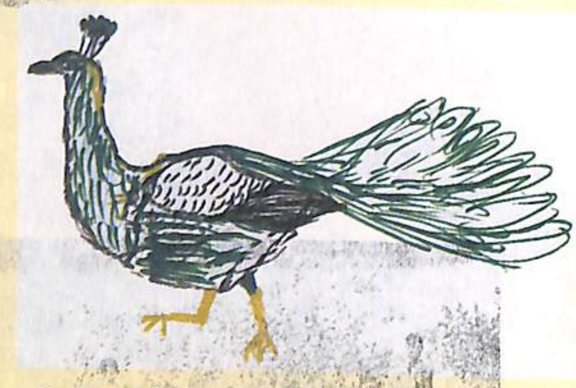
हर्षितासिंह सेगर, सातवीं, भोपाल



अंजु, चौथी, हाटपिपल्या, देवास, म.प्र.



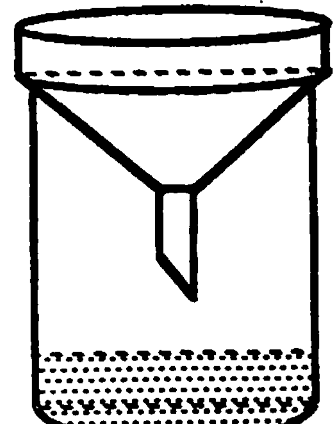
नसीम, तीसरी, नोएडा, उ.प्र.



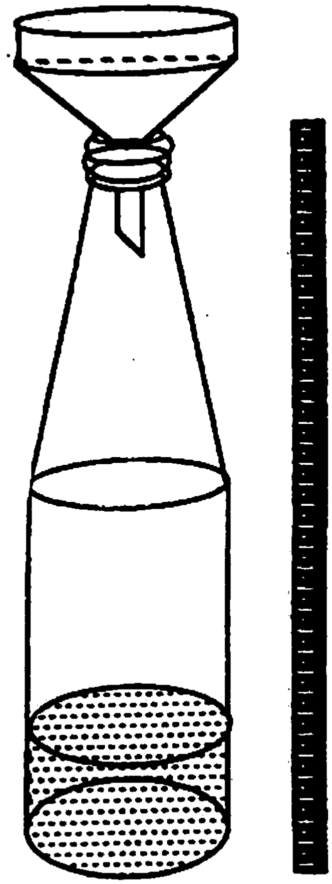
दिलीप ककोड़िया, आठवीं, हरणगाँव, देवास, म.प्र.

वर्षामापी बनाओ

बारिश के दिन हैं। तुम अक्सर टेलीविज़न या अखबारों में पढ़ते सुनते होगे कि फलाँ जगह इतने सेण्टीमीटर बारिश हुई। फलाँ जगह इतनी बारिश हुई। क्या तुम इस सेण्टीमीटर में बारिश के नापने के मायने जानते हो? दरअसल वर्षा नापने का एक उपकरण होता है जो बताता है कि फलाँ दिन कितनी बरसात हुई। अगर किसी जगह पंद्रह मिलीमीटर बारिश हुई है तो इसका मतलब है कि बारिश में जितना पानी गिरा यदि उसे ज़मीन न सोखे, न वह बहे तो धरती पर पानी की पंद्रह मिलीमीटर की परत बन जाती। बस वर्षामापी में इसी तरह पानी को रोककर बारिश को नापा जाता है।



एक-दो चीज़ें जुगाड़ लो तो तुम भी वर्षामापी बना सकते हो। या तो बड़ी-सी थाली या बड़ा टब या बाल्टी। चाहो तो एक बोतल ले सकते हो। अगर बोतल लेते हो तो एक बड़ी-सी कीप या चुंगी भी ले लेना। एक स्केल की ज़रूरत भी पड़ेगी। वर्षामापी बनाने के लिए तुम्हें ज़्यादा कुछ नहीं करना है। बस जब बरसात होने वाली हो तो इस बोतल में यह कीप लगाकर बाहर रख दो। जब बारिश बंद हो जाए तो इसे स्केल से नाप लो। यहाँ दो-तीन चीज़ें ध्यान रखने की ज़रूरत पड़ेगी। पहली चीज़ तो यह कि बोतल की बनावट चित्र में दिखाई बोतल की बनावट जैसी होनी चाहिए। दूसरी बात, कीप की गोलाई यानी व्यास को सावधानी से नाप लो।

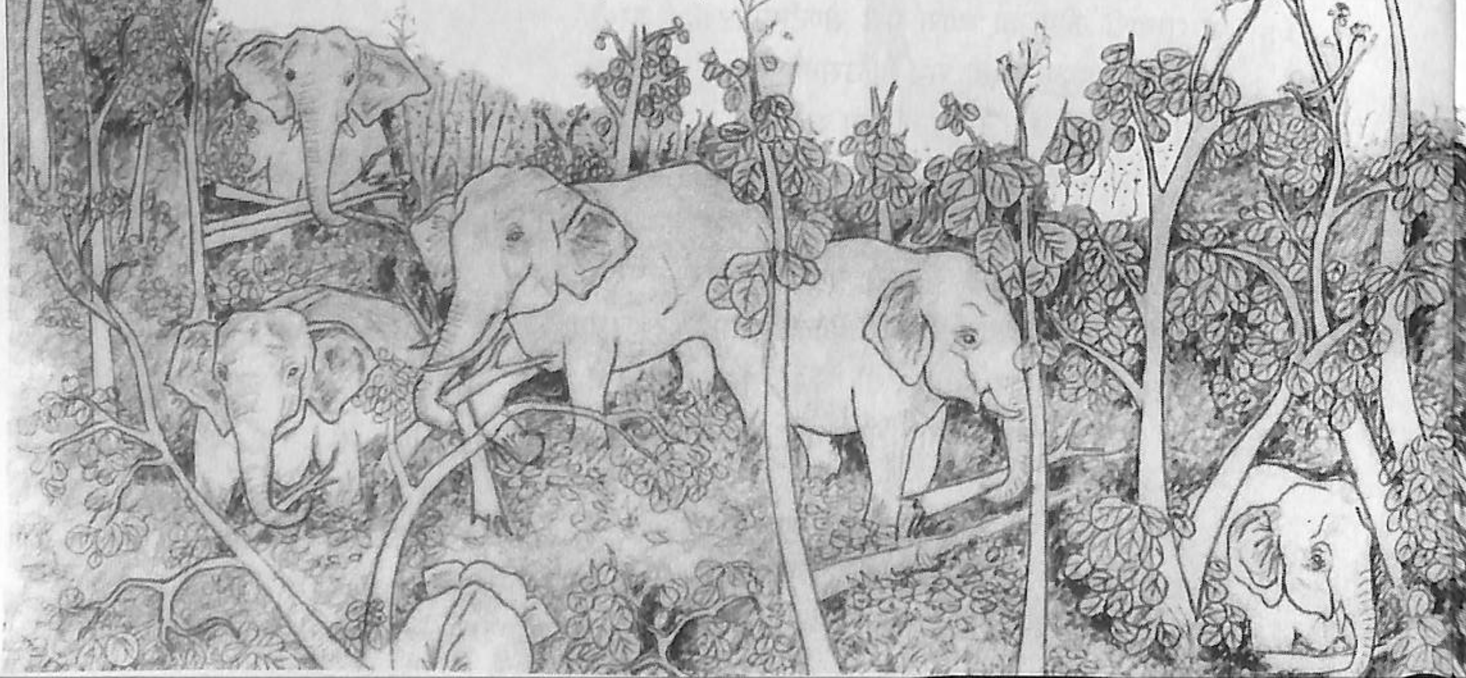


मान लो तुम्हारी कीप का व्यास दस सेण्टीमीटर है। उसके नीचे जिस बोतल में पानी इकट्ठा हो रहा है उसकी गोलाई या व्यास एक सेण्टीमीटर है। और यदि बोतल में पानी का स्तर एक सेण्टीमीटर है तो इसका मतलब है कि बारिश एक सेण्टीमीटर हुई है। क्योंकि जिस कीप से हमने पानी इकट्ठा किया है। उसकी गोलाई जिस बोतल में पानी इकट्ठा हुआ है उसकी गोलाई से दस गुना कम है। अगर इसकी जगह तुमने पानी एक ऐसे बर्तन में इकट्ठा किया होता जिसकी गोलाई मुँह से लेकर तली तक बराबर हो तो ऐसी स्थिति में उस बर्तन में पानी का तल जितना होगा बारिश की माप भी उतनी ही होगी। ●

आलापल्ली के हाथी

बात 1953-54 की है जब मेरे पिता आलापल्ली के जंगल विभाग के अधिकारी थे। आलापल्ली अब महाराष्ट्र के चन्द्रपुर जिले में है पर उन दिनों यह मध्यप्रदेश में था। मैं तब 8 या 9 साल की रही होऊँगी। आलापल्ली के आसपास सागौन के घने जंगल थे। मैं अपने पिता को दादा कहती थी, असल में सभी उनको दादा कहते थे। उन्हें जानवरों की आदतों को देखने-समझने का बहुत शौक था साथ ही वे बहुत अच्छी शिकारी भी थे। कभी-कभी वे हम भाई-बहिनों को भी अपने साथ जंगल घुमाने ले जाते थे और अक्सर जंगल की और जानवरों की सच्ची कहानियाँ सुनाया करते थे।

आलापल्ली के आसपास के सागौन के उन जंगलों में सड़कें नहीं थीं इसलिए लकड़ी की ढुलाई का काम हाथियों से लिया जाता था। ये हाथी जंगल के भीतरी भाग से सड़क या डिपो तक सागौन के बड़े-बड़े लट्ठे खींच-खींच कर लाते और उन्हें ट्रकों में लादने का कठिन काम भी करते। आलापल्ली में सात हाथी थे। मुझे उनके नाम आज भी याद हैं। तीन तो नर हाथी थे- सुरेन्द्रगज, हरिहरगज और लक्ष्मीप्रसाद और चार हथिनियाँ थीं- गौहर जान, मौलाप्यारी और शीतल कली। एक का नाम मुझे अब याद नहीं। इन हाथियों को काम करते देखना तब बहुत रोमांचकारी होता था। गौहर जान सागौन के लट्ठे का काम सबसे ज़्यादा करती थी और सबसे ताकतवर भी वही थी। लक्ष्मीप्रसाद हाथी कद में छोटा होने के साथ, काफी मोटा भी था। उसके दाँत भी बड़े-बड़े थे। नर हाथियों से ऊँचा भी था। सुरेन्द्रगंज का छोटा भाई हरिहरगज बड़े-बड़े दाँतो वाला था और सभी हाथियों से ऊँचा भी था। सुरेन्द्रगज का छोटा भाई हरिहरगज था। उसके दाँत छोटे थे और वह ज़रा बदसूरत-सा था, लेकिन उसकी ऊँचाई अच्छी थी। शीतलकली हथिनी बड़ी शरारती थी। एक बार उसने सूंड से अपने महावत को ही दबा लिया और उसकी एक पसली तोड़ दी थी। अगर कभी किसी गाँव के पास वह किसी झाड़ से बंधी होती और गाँव के स्त्री-पुरुष और बच्चे उसे देखने आते तो, वह दो-तीन किलो वजन के पत्थर उठाकर उन पर फेंकती। सबसे सुशील और सीधी हथिनी थी मौलाप्यारी; कद में सबसे

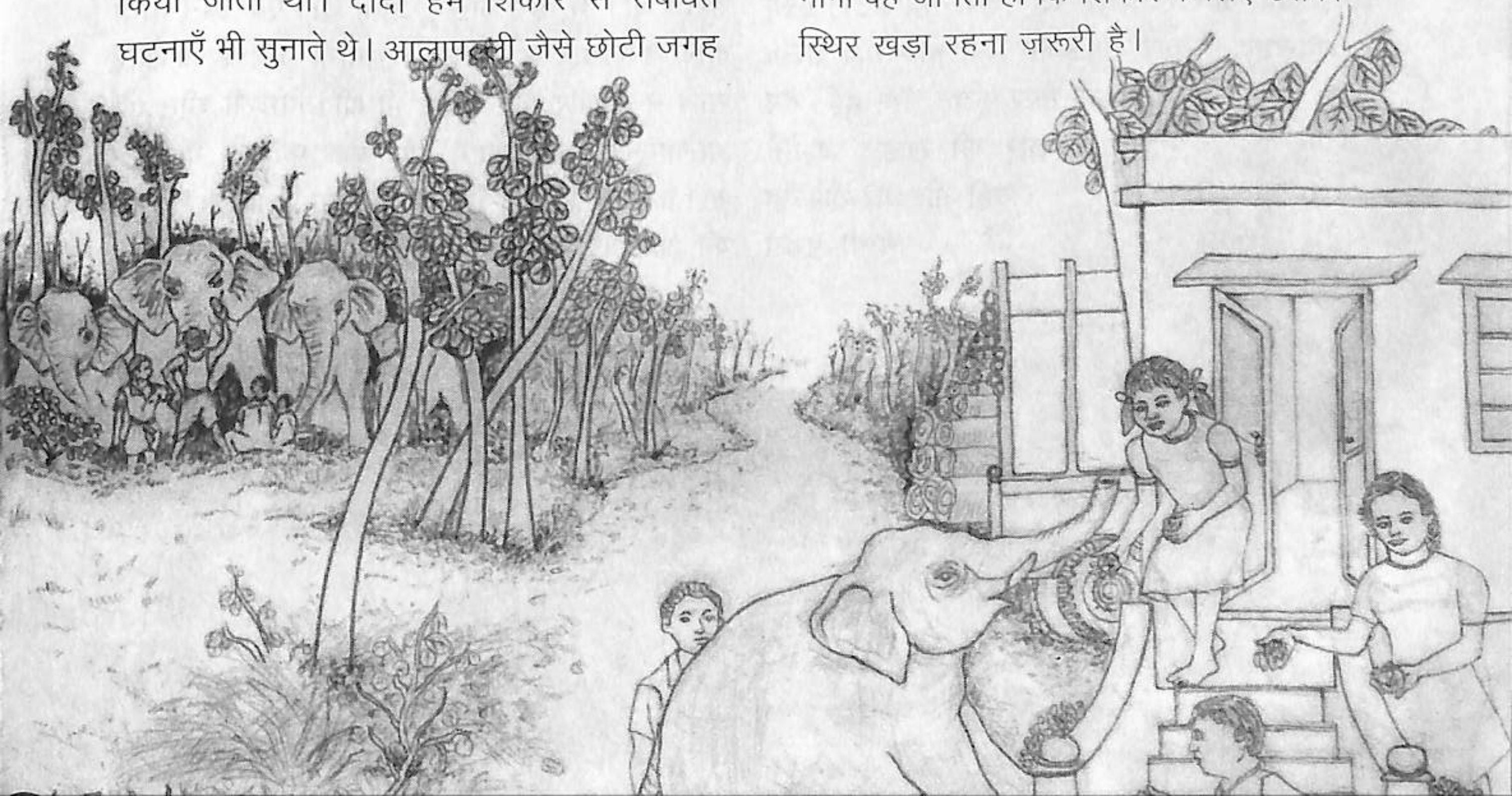


छोटी यह हथिनी हम बच्चों से बहुत हिलीमिली थी और बच्चे उसे घेरे रहते थे।

ये सब हाथी सोमवार की सुबह अपने-अपने जंगलों में लकड़ी ढोने चले जाते थे और शनिवार की शाम को वापस आलापल्ली आ जाते। नियम यह था कि सब हाथियों का खाना जंगल विभाग के अधिकारी के सामने ही दिया जाना चाहिए इसलिए उन्हें खाना दादा के सामने दिया जाता था। हाथियों के भोजन का दृश्य आज भी मुझे याद है। सातों हाथी पहले एक लाइन में खड़े होते, फिर सूंड उठाकर सलाम करते। उसके बाद दादा उन्हें अपने सामने खाना खिलवाते। मैं और मेरी बड़ी बहिन अपने सरकारी क्वार्टर के बरामदे में हाथ में गुड़ के ढेले लिए खड़े रहते। रोटियाँ खाने के बाद बिना कुछ कहे मौलाप्यारी बहुत धीरे-धीरे संकोच के साथ हम बच्चों की ओर आती थी, और हम लोगों के हाथ से गुड़ के ढेले लेकर बड़े चाव से खाती। यह हमेशा ही होता था।

दादा हमें इन हाथियों के स्वभाव के बारे में और जानवरों के बारे में जब-तब बताते रहते थे। उन दिनों जंगली जानवरों और शेर के शिकार की मनाही नहीं थी। अक्सर हाथी पर बैठकर शिकार किया जाता था। दादा हमें शिकार से संबंधित घटनाएँ भी सुनाते थे। आलापल्ली जैसे छोटी जगह में, जब न रेडियो होते थे और न बिजली, जानवरों की ये रोमांचक कहानियाँ ही हमें बाँधने वाली होती थीं।

दादा बताते थे कि गौहर जान काम तो सबसे अधिक करती थी, पर वह बेहद डरपोक थी। शेर की बात छोड़िए, वह किसी भी जंगली जानवर से डरती थी। उसके पास से अगर चीतल या साँभर भी निकल जाता था, तो वह डर कर भाग खड़ी होती। लक्ष्मीप्रसाद कुछ डरते-डरते शेर की तरफ बढ़ता, पर वह थोड़ी देर के लिए भी स्थिर नहीं हो पाता था। उसका हौदा हमेशा हिलता ही रहता, जिससे उस पर बैठकर शेर का शिकार नहीं किया जा सकता था। सबसे साहसी हाथी सुरेन्द्रगज था। वह शेर से भिड़ने के लिए बेहद उत्सुक रहता। उसके सामने कोई भी शेर रुकने की हिम्मत नहीं कर सकता था। सूंड उठाकर भयंकर रूप से चिंघाड़ते हुए वह शेर को दूर तक खदेड़ आता था। उसकी इस आदत से उसके हौदे पर बैठे शिकारी की मुसीबत हो सकती थी। अतः सुरेन्द्रगज की पीठ से शिकार करना असम्भव था। सुरेन्द्रगज का छोटा भाई हरिहरगज भी बहुत बहादुर था। शेर के सामने चट्टान की तरह खड़ा रहता था। मानो वह जानता हो कि शिकार के लिए उसका स्थिर खड़ा रहना ज़रूरी है।



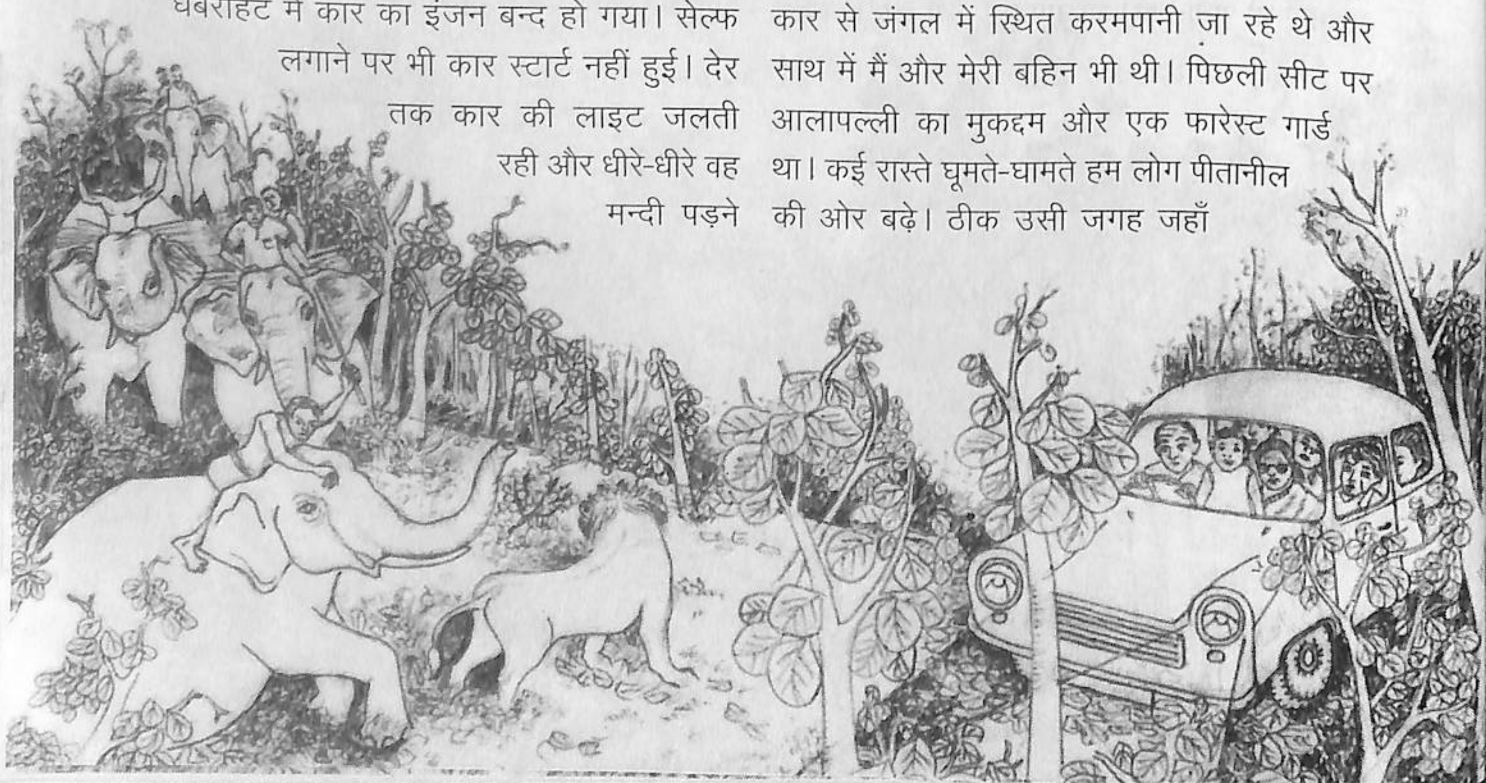
खास मौके पर वह ज़रा भी नहीं हिलता था, और कोई नौसिखिया भी उस पर बैठकर गोली चला सकता था।

उन्हीं दिनों की बात है। दादा के एक मित्र बूट साहब किसी सरकारी काम से आलापल्ली आए थे और वहाँ के डाकबंगले में याने विश्रामगृह में रुके थे। उनके कुछ मेहमान भी उनके साथ थे, जो शेर देखना चाहते थे। दादा ने उन्हें एक विशेष रास्ते पर अपनी कार से जाने की सलाह दी, जहाँ सरलता से शेर देखे जाने की संभावना थी। वह रास्ता था आलापल्ली से पीतानील का। बूट साहब के मेहमान कार में पीतानील की ओर शेर देखने रवाना हो गए। रात में जब मेहमान लोग कार में लौटे, तब उनकी मुसीबत का पता चला।

हुआ यह था कि झुटपुटे के बाद ही पीतानील से दो मील पहले उन्हें रास्ते पर आड़े बैठा एक बहुत बड़ा शेर दिखा। बन्द कार के भीतर बैठे सब पुरुषों, महिलाओं और बच्चों ने कार की रोशनी में उसे देखा। साथ में जो गाइड था, उसने उनसे कहा कि जब आप शेर को देख चुकें, तब हॉर्न देकर कार को थोड़ा आगे बढ़ाएँ। इससे शेर रास्ते से हट जाएगा। शेर देख चुकने के बाद उन सज्जन ने गाड़ी तो आगे बढ़ाई नहीं, और हॉर्न देते रहे। शेर नहीं हटा। इसी घबराहट में कार का इंजन बन्द हो गया। सेल्फ लगाने पर भी कार स्टार्ट नहीं हुई। देर तक कार की लाइट जलती रही और धीरे-धीरे वह मन्दी पड़ने लगी। कार में हैण्डल लगाने की व्यवस्था भी नहीं थी। शेर जहाँ का तहाँ बैठा रहा और कार में बैठे लोग पसीना-पसीना होते रहे।

संकट के इन क्षणों में कार में बैठे लोगों ने देखा कि सामने से सुरेन्द्रगज और तीन दूसरे हाथी अपने महावतों और चारा काटने वालों के साथ पीतानील से आलापल्ली लौट रहे थे। हाथियों को देखकर इन लोगों की जान में जान आई। सुरेन्द्रगज के आते ही शेर वहाँ से हट गया, लेकिन सुरेन्द्रगज को संतोष नहीं हुआ। रोकने पर भी वह शेर की ओर बढ़ा। सुरेन्द्रगज सूंड उठाकर तेजी से शेर की ओर बढ़ा और चिंघाड़ते हुए दूर तक शेर को खदेड़ आया। मेहमानों ने महावतों को अपनी हालत बताई। मौलाप्यारी ने सूंड से गाड़ी को ठेला और गाड़ी स्टार्ट हो गई। इस प्रकार ये सब लोग डाक बंगले पहुँचे और सारा हाल बताया। चारों महावतों और उनके साथ के चारा काटने वालों को मेहमानों ने अच्छा इनाम दिया। दूसरे दिन सभी मेहमान वापस चले गए। शेर के प्रति सुरेन्द्रगज के आक्रामक रुख का यह एक नमूना था।

पीतानील का यह विशालकाय और ढीठ शेर सुरेन्द्रगज को छोड़कर बाकी हाथियों से अधिक नहीं डरता था। हाँ, हट ज़रूर जाता था। एक दिन दादा कार से जंगल में स्थित करमपानी ज़ा रहे थे और साथ में मैं और मेरी बहिन भी थी। पिछली सीट पर आलापल्ली का मुकद्दम और एक फारेस्ट गार्ड था। कई रास्ते घूमते-घामते हम लोग पीतानील की ओर बढ़े। ठीक उसी जगह जहाँ



पहले वाले हादसे में शेर बैठा मिला था, वही बड़ा शेर सड़क पर आड़ा बैठा था।

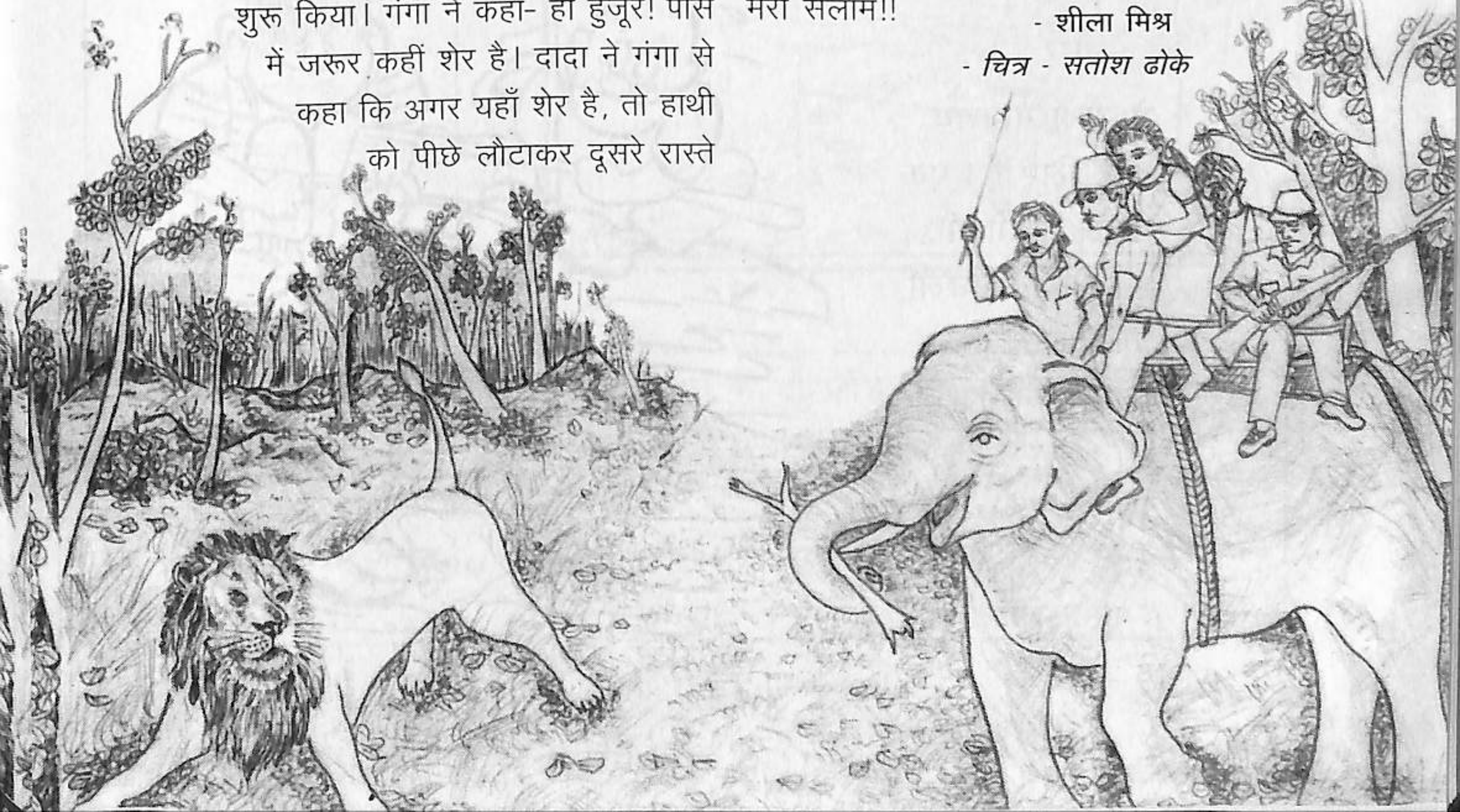
तभी हमने देखा कि गंगा महावत बिना कहे ही जंगल से हरिहरगज हाथी को लेकर वहाँ आ पहुँचा। उसे वहाँ दादा के होने की बात पता चल गई थी और वह जानता था कि हरिहरगज दादा का प्रिय हाथी था। हरिहरगज आते ही अपना एक पैर-धप-धप कर के ज़मीन पर पटकने लगा। जब हाथी पैर पटकता है, तब आसपास की जमीन हिलती मालूम होती है। दादा ने गंगा से पूछा कि हरिहरगज ऐसा क्यों कर रहा है, तो गंगा महावत ने जवाब दिया कि हाथी सूअर को देखकर ऐसा कर रहा है। दादा ने उससे कहा कि उन्होंने हरिहरगज के सामने कई बार सुअर मारे हैं, पर इसने कभी ऐसे पैर नहीं पटका। ज़रूर ही पास में शेर है।

दादा के कहने पर गंगा महावत ने हाथी को बिठाया और हम लोग जल्दी-जल्दी हाथी पर बैठ गए। दादा ने गंगा से कहा कि वह हाथी को घास के खुले मैदान से निकाल ले चले। उस मैदान में छोटी घास थी और एक भी झाड़ नहीं था, और वहाँ शेर की संभावना नहीं थी। चलते-चलते हाथी खुद-ब-खुद रुक गया और सूंड उठाकर उसने पैर पटकना शुरू किया। गंगा ने कहा- हाँ हुजूर! पास में जरूर कहीं शेर है। दादा ने गंगा से कहा कि अगर यहाँ शेर है, तो हाथी को पीछे लौटाकर दूसरे रास्ते से चले। लेकिन तभी हरिहरगज ने अपनी फुर्ती से पास में पड़ी एक सूखी लकड़ी उठाकर एक ओर जोर से फेंकी। लकड़ी का टुकड़ा गिरते ही वहाँ शेर उठ खड़ा हुआ। शेर की दूरी हाथी की सूँड से कोई बीस फुट रही होगी। धीरे-धीरे शेर जाने लगा। शेर से दूर होने के लिए दादा ने हाथी को बाईं तरफ चलने को कहा। हम साँस रोके शेर को देख रहे थे। उसकी छवि आज भी मेरे मन में अंकित है। बहुत सुन्दर और विशाल शेर था वह। कान के नीचे के लम्बे-कल्ले उसकी खूबसूरती बढ़ा रहे थे। डूबते सूरज की किरणें उसके सुडौल जिस्म पर पड़ रही थीं और उसका काले पट्टों वाला सुनहरा चमड़ा दपदपा रहा था। हरिहगज स्थिर खड़ा था। हरिहरगज से शेर की दूरी बढ़ती जा रही थी और हम सभी कुदरत के उस खूबसूरत करिश्मे को बिना पलक झपकाए तब तक देखते रहे जब तक वह आगे झाडियों में ओझल नहीं हो गया।

इतने बरस बाद आलापल्ली के वे हाथी शायद ही मौजूद होंगे, पर मेरे बचपन की यादों में वे अभी भी मौजूद हैं। जब भी घर में गुड़ का ढेला हाथ में लेती हूँ तो मौलाप्यारी की आकृति आँखों के सामने आ जाती है। उन सभी प्यारे हाथियों को मेरा सलाम!!

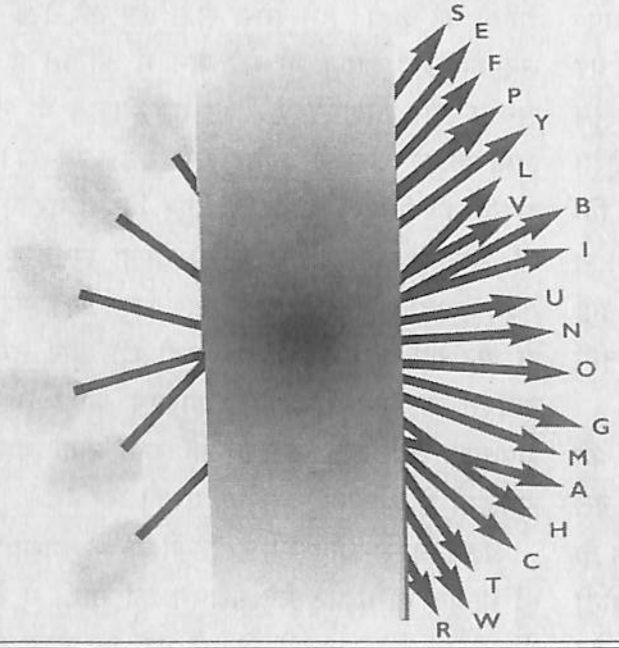
- शीला मिश्र

- चित्र - सतोश ढोके





माथा पच्ची



बाईं तरफ के तीरों में एक पूँछ लगी है। बीच में पट्टी है। पट्टी भी जादुई है। पता ही नहीं चलता कि पूँछ वाले किस तीर की नोंक कौन-सी है। तुम भी कोशिश करो।



ये दोनों महाशय काँटे लिए हैं। एक मछली फँसी भी है। लेकिन मछली को फाँसने वाला काँटा किसका है?



क्या तुम बता सकते हो कि प्रश्नवाचक चिन्ह वाले स्थान पर कौन-सी संख्या आएगी?



शबाना को एक अखबार के दो-दो पन्नों के दो जोड़े मिले- एक जोड़े पर

पेज नंबर 1-2 व 71-72 था

दूसरे जोड़े के एक हिस्से पर

पेज नंबर 13-14 लिखा था

इस जोड़े के बाकी दो पेज नंबर कौन-से होंगे?

सिनेमा सिनेमा

एक मार्मिक फिल्म

ब्लैक



शरीर से थोड़े अक्षम व्यक्तियों की कहानियों पर हिन्दी में भी बहुत-सी अच्छी फिल्में बनी है। पुराने ज़माने की फिल्म 'दीदार' में दिलीपकुमार ने एक अंधे व्यक्ति की भूमिका की थी। महबूब की प्रसिद्ध फिल्म 'मदर इण्डिया' में राजकुमार के दोनों हाथ कट जाते हैं। सत्येन बोस की फिल्म 'जागृति' दो दोस्तों अजय और शक्ति की कहानी है जिनमें शक्ति लंगड़ा है। इस फिल्म का गाना *'आओ बच्चों तुम्हें दिखाएँ झाँकी हिन्दुस्तान की'* बहुत लोकप्रिय हुआ था। राजश्री फिल्मस की हिट फिल्म 'दोस्ती' भी दो दोस्तों की कहानी है जिनमें एक लंगड़ा है और दूसरा अंधा। 'मेहमान' फिल्म में नायक की भूमिका सुनीलदत्त ने की थी। नायक का एक पाँव और एक हाथ लकवाग्रस्त था।

शुरू-शुरू में शारीरिक अक्षमताओं को हँसी का बहाना समझा जाता था और शारीरिक रूप से अक्षम लोगों का उपहास किया जाता था। जैसे मोटे आदमी का फिसल जाना या ऊँचा सुनने वाले व्यक्ति के पास खड़े होकर धीमे सुर में उसे भला-बुरा कहना। या मानसिक संतुलन खो चुके व्यक्ति की हरकतों पर हँसना। यह कोई अच्छी बात तो है नहीं। धीरे-धीरे ऐसे व्यक्तियों के प्रति सहानुभूति का भाव प्रदर्शित किया जाने लगा। यह सिद्ध किया जाने लगा कि एक कमी से क्या होता है। ऐसे व्यक्तियों में दूसरे गुण औरों से ज़्यादा होते हैं। मान्यता यह रखी गयी कि शारीरिक रूप से अक्षम व्यक्तियों की सहायता की जानी चाहिए।

लेकिन अनेक वर्ष बाद यह महसूस किया गया कि किसी पर दया करना भी खुद को उससे ऊँचा समझना और एक तरह से उसे नीचा दिखना है। सही यह होगा कि उनके साथ समानता का व्यवहार किया जाए। ऐसे विचार सामने रखने वाली एक सुन्दर फिल्म थी संई परांजपे की 'स्पर्श' जिसमें नसीरुद्दीन शाह ने एक अँधे व्यक्ति की भूमिका की थी।

गूँगे-बहरों की वेदना और चिन्ता को व्यक्त करनेवाली एक सुन्दर फिल्म थी गुलज़ार की 'कोशिश' और ऐसी ही एक और फिल्म थी संजय भंसाली की 'खामोशी' जिसमें नाना पाटेकर और सीमा बिस्वास ने मनीषा कोइराला के गूँगे-बहरे माँ-बाप की भूमिका में प्रभावशाली अभिनय किया था।

ऐसी ही एक और सुन्दर फिल्म इस वर्ष आई



है जिसका नाम है **ब्लैक**। इसे भी संजय लीला भंसाली ने ही निर्देशित किया है। इस फिल्म में अमिताभ बच्चन और रानी मुखर्जी ने मुख्य भूमिकाएँ निभायी हैं। फिल्म एक बच्ची मिशेल के बारे में है जो न देख सकती है और न सुन सकती है न ही बोल सकती है।

फिल्म एक सर्वथा नयी बात कहती है। मिशेल का अध्यापक किसी को उसकी मदद नहीं करने देता। फिल्म कहती है कि यदि तुम सचमुच ऐसे लोगों के लिए कुछ करना चाहते हो तो उन्हें दूसरों की मदद पर निर्भर रहना मत सिखाओ, बल्कि उन्हें चीज़ों को समझना, अपना काम खुद करना और अपने पैरों पर खड़े होना सिखाओ। अध्यापक यही करता है। लम्बे संघर्ष और लगातार परिश्रम से वह मिशेल को अपने पैरों पर खड़े होना सिखाता है और मिशेल के शब्दों में उसे जीवन में पहली बार आज़ादी का अर्थ मालूम होता है। हालाँकि इस संघर्ष में स्वयं अध्यापक अपनी बोलने-सुनने-समझने की क्षमता खो बैठता है। फिल्म के अंत में मिशेल अपने अध्यापक को उसी के तरीके से आत्मनिर्भर बनाने की कोशिश करती दिखाई देती है।

अँधी-बहरी-गूँगी मिशेल को अपने पैरों पर खड़े होने के लम्बे संघर्ष, अध्यापक के अनथक प्रयत्न और मिशेल के घरवालों की आशंका, भय, आश्चर्य और प्रफुल्लता की यह अदभुत कहानी बहुत मार्मिक तरीके से कही गयी है। यह कहानी न सिर्फ हमारे दिल को छूती है बल्कि शारीरिक रूप से अक्षम व्यक्तियों के प्रति उचित व्यवहार की एक नयी और बेहतर समझ भी देती है।

फिल्म में अमिताभ बच्चन और रानी मुखर्जी दोनों ने बहुत अच्छा अभिनय किया है, लेकिन इनसे भी अच्छा अभिनय किया है आयशा कपूर ने जिसने मिशेल की बचपन की भूमिका की है।

फिल्म की फोटोग्राफी और पार्श्वसंगीत बहुत प्रभावशाली है। फिल्म में कोई गाना नहीं है। एक बात ज़रूर खटकने वाली है। फिल्म के अनेक संवाद अंग्रेज़ी में हैं।

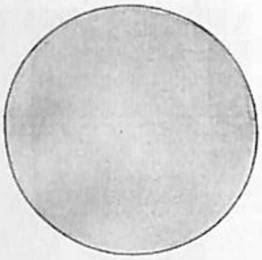
तुम्हें मौका मिले तो यह फिल्म ज़रूर देखना।

डमरू

ज़रूरी सामान

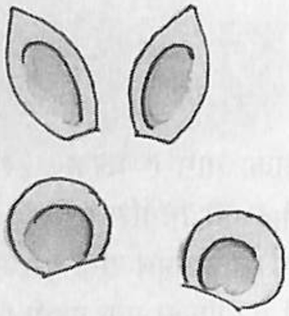
कार्ड शीट, सादा कागज़ थोड़ा मोटा, धागा, मोती, गोंद या फेवीकोल, सेलोटेप, कैंची।

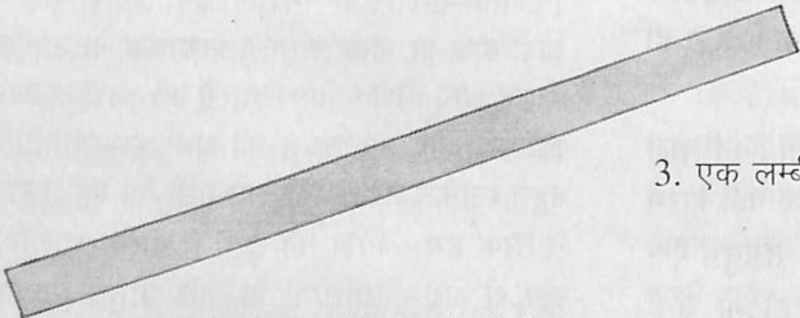
1. सबसे पहले चित्र के अनुसार कार्डशीट को काटकर दो गोले बना लो। इसे बनाने के लिए परकार के अलावा चूड़ी या गिलास की मदद ले सकते हो।





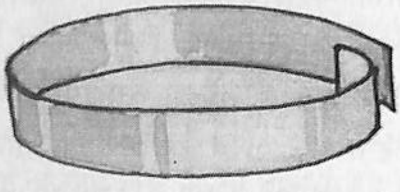
2. दोनों गोल कार्डों पर बाहर की ओर अपनी पसंद के जानवर का चेहरा बनाओ। और कार्डशीट से काटकर चार तिकोने या गोल कान बनालो।

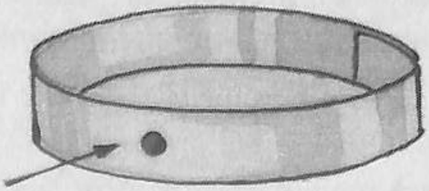




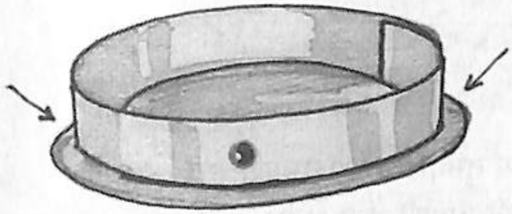
3. एक लम्बी पट्टी कार्डशीट से काट लो।

4. पट्टी के दोनों छोरों को गोंद से चिपकाकर एक चूड़ीनुमा आकृति बना लो। यह आकृति गोल कार्ड के घेरे से थोड़ी कम होना चाहिए।

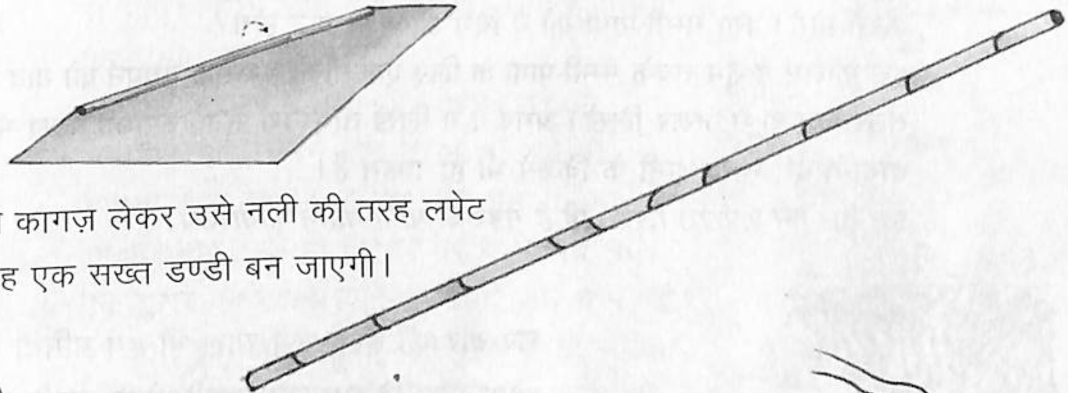




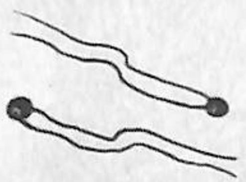
5. इस चूड़ीनुमा आकृति में एक छोटा-सा छेद बना लो।



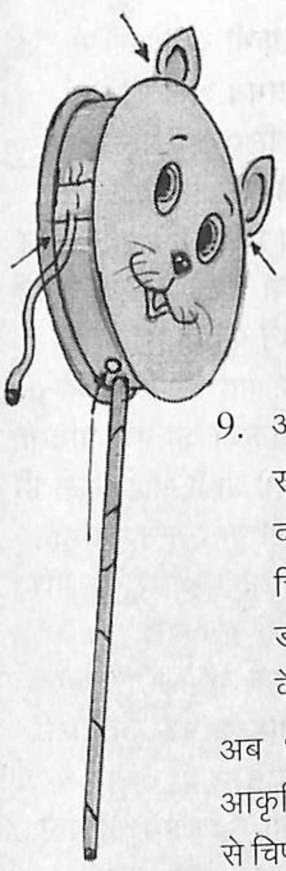
6. अब चूड़ीनुमा आकृति के दोनों ओर गोलकार्डों को गोंद से चिपका दो। ध्यान रहे कि चूड़ीनुमा आकृति में गोल कार्ड इस तरह चिपकें कि दोनों ओर जानवर का मुँह सामने रहे और चूड़ीनुमा आकृति में तुमने जो छेद बनाया है वह नीचे की ओर रहे।



7 चौकोर सादा कागज़ लेकर उसे नली की तरह लपेट लो। इस तरह एक सख्त डण्डी बन जाएगी।



8. लगभग चार इंच का एक धागा लेकर उसके बीच में मध्यम आकार का एक मोती पिरो दो। बिल्कुल ऐसा ही एक और धागा-मोती बनाओ।



9. अब तीन चीज़ें करनी है। सबसे पहले चेहरे के ऊपर दोनों तरफ दो-दो कान चिपका दो। फिर कागज़ की डण्डी को चूड़ीनुमा आकृति के छेद में डाल दो।

अब धागा-मोती को चूड़ीनुमा आकृति के दाईं-बाईं ओर टेप से चिपका दो। धागा-मोती चिपकाते हुए यह ध्यान रखना कि डमरू घुमाने पर वह बिल्ली के चेहरे के बीचोंबीच लगे।

लो हो
गया न
डमरू तैयार!



चित्र- विवेक वर्मा

जब मम्मी-पापा बच्चे थे

ऐसे भी दिन हुए हैं जब मम्मी-पापा बच्चे हुआ करते थे तुम्हारी तरह! तुम्हारी तरह उन्हें भी डाँट पड़ती होगी। धमाचौकड़ी वे भी मचाते होंगे। वे भी तुम्हारी तरह उदास और खुश हुआ करते होंगे। क्या मम्मी-पापा को वे दिन आज भी याद होंगे?

इस कॉलम में तुम सबके मम्मी-पापा के लिए एक मौका है उनके बचपन को याद करने का। उनसे कहना वे ज़रूर लिखें। अगर वे न लिखें तो उनसे सुनकर तुम्हीं लिख भेजना। हाँ, दादा-दादी, नाना-नानी के किस्से भी हो सकते हैं।

इस बार *की शरारत लिख रहे हैं मेहर के पापा मोहन श्रीवास्तव।*



हर बार की तरह उस साल भी हम गर्मियों की छुट्टियों में गोवा गए। दिनभर मटरगश्ती होती। कभी दो किलो मीटर दूर समुद्र में नहाने चले जाते। आते समय शंख सीपियाँ लाना न भूलते। भोपाल के दोस्तों के लिए अच्छा उपहार होता। कभी नारियल के पेड़ पर चढ़ने की कोशिश करते।

एक दिन मामा के लड़के ने कहा कि उसने एक खोज की है। नारियल के पेड़ पर आसानी से चढ़ने के एक तरीके की खोज। हमने उससे चढ़कर दिखाने को कहा। अगले दिन दोपहर को नाना के सो जाने के बाद हम सब दबे पाँव बाहर निकले। तैयारी पूरी थी। लकड़ी का एक पटिया, रस्सी, छड़ी। उसने पाँवों के बीच रस्सी बाँधी और चढ़ने ही वाला था कि पेड़ के पास एक गिलहरी कुछ कुतरती हुई दिखाई दी। मौसी के छोटे बेटे ने एक कंकड़ उसकी ओर उछाल दिया। वो भागी। हम सब भी कंकड़ उछालते उसके पीछे चल दिए। कभी वो कटहल के पेड़ पर चढ़ बैठती तो कभी नारियल पर। कभी आम के पेड़ का दौरा कर आती। पीछे पीछे हम सब थे। इंतने में वो बरगद के एक बड़े से पेड़ के कोटर में गायब हो गई। हम भी वहाँ पहुँचे। और कोटर में कंकड़ फेंकने लगे। वो न निकली। कितनी देर खड़े रहते। मेरा ममेरा भाई बोला, मैं झाँककर देखता हूँ। क्या कर रही है अन्दर। वो कोटर के ऊपर तक पहुँचा। दो एक भाई और चढ़ने लगे। कुछ नीचे खड़े कंकड़ फेंकते रहे।



अचानक हमारी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। कोटर से एक काला साँप झाँक रहा था। सबसे पहले चढ़ा भाई इतना घबरा गया कि वहीं से कूदने को तैयार हो गया। बड़ी मुश्किल से उसे वहीं बैठे रहने को कहा। दो लोग भागकर सीढ़ी ले लाए। किसी तरह उसे उतारा। साँप मुआयना कर गायब हो चुका था।



एक डर खत्म हुआ। पर दूसरा डर आ समाया। साँप ने हमें देख लिया है। अब वो आएगा। हम डरकर घर की ओर भागे। बिना आवाज़ किए एक ही बिस्तर पर सभी लद गए। एक दूसरे को पकड़े हुए। घबराहट कुछ कम हुई। पर अभी रात आनी बाकी थी। कुछ भी हो सकता है का डर बहुत बढ़ गया। हिम्मत कर नाना को सब कुछ बता दिया। उन्होंने कहा कुछ नहीं होगा। पर फिर भी एक छड़ी दी। उसके सिरे पर साँप का फन बना था। रात में उठ-उठकर एक दूसरे को देखते रहे। सुबह एक बार फिर गिनती की। सब के सब थे। दो दिन घर बैठे खेलते बिताए।

फिर तीसरे ही दिन
एक नई शरारत...



चित्र- सतीश ढोके

हम किसी से कम नहीं

हम यानी मनुष्य हज़ारों साल पहले भोजन प्राप्त करने के लिए औज़ारों का इस्तेमाल करते थे। ये औजार पत्थरों, हड्डियों आदि से बने होते थे। पत्थरों को तोड़कर, उनको नुकीला और धारदार बनाया जाता था। उनकी मदद से कंद-मूल उखाड़े जाते थे। शिकार किया जाता था। यह हुनर कुछ जंतुओं में भी देखा जाता है। ये पशु-पक्षी शिकार को मारने या पकड़ने के लिए औज़ारों का उपयोग करते हैं। ऐसे कुछ जीवों के बारे में हम यहाँ बात करेंगे।

एक हुनरमंद गिद्ध

यह एक किस्म का गिद्ध होता है जो इजिप्ट यानी मिस्र में पाया जाता है। इसको इजिप्शियन गिद्ध के नाम से जाना जाता है। यह गिद्ध हमारे यहाँ पाए जाने वाले गोबर गिद्ध से काफी मिलता-जुलता होता है। इस गिद्ध को शुतुरमुर्ग के अंडों को खाने का बड़ा शौक होता है। पर इसको तोड़ें कैसे? शुतुरमुर्ग के अण्डों का बाहरी कवच बहुत कड़ा होता है। वैसे भी शुतुरगमुर्ग का अंडा दुनिया के अंडे देनेवाले सभी जीवित प्राणियों में सबसे बड़ा होता है। यह गिद्ध इस भारी भरकम अंडे को फोड़ने के लिए पत्थर का उपयोग करता है। यह गिद्ध पत्थर को चोंच में लेकर अंडे पर वार करता है। जब अंडा फूट जाता है तो गिद्ध उस अंडे के भीतर का पोषक पदार्थ खा जाता है। मान लो शुतुरमुर्ग ने एक ऐसी जगह पर अंडे दिए हैं जहाँ कोई पत्थर है ही नहीं। तब क्या होगा? क्या गिद्ध शुतुरमुर्ग के अण्डे को छोड़ देगा? जी नहीं! तब गिद्ध काफी दूर से पत्थर को अपनी चोंच में दबाकर लाता है। देखा तो यहाँ तक गया है कि एक भूखा गिद्ध कोई 5 किलोमीटर तक की दूरी से पत्थर अपनी चोंच में पकड़कर उड़ते हुए लाता है। हालाँकि यह काम आसान नहीं है, पर जीना इसी का नाम है!



समुद्री ऊदबिलाव की कारस्तानी

सी-ओटर यानी समुद्री ऊदबिलाव। यह कहानी है प्रशांत महासागर के उत्तरी-पूर्वी भाग में पाये जाने वाले एक ऊदबिलाव की। यह कभी भी समुद्र के किनारे नहीं आता, न तो बच्चों के जन्म के दौरान, न भोजन के लिए, और न ही आराम फरमाने के लिए। यह पूरे समय पानी में ही रहता है। समुद्र में पाए जाने वाले जीव मसलन मछलियाँ, शैलफिश, सी-अर्चिन आदि इसका भोजन हैं। जिन जंतुओं को यह अपना भोजन बनाता है उनमें से कई के शरीर पर जहरीले काँटे होते हैं या उनके शरीर पर कड़ा कवच होता है। सी-अर्चिन में ज़हरीले काँटे होते हैं। अपना आहार बनाने से पहले ऊदबिलाव सी-अर्चिन को समुद्र में उगने वाली खरपतवार में उलझा देता है। और फिर उसके शरीर से काँटे निकालकर उसे चट कर जाता है। कड़े खोल वाले जंतुओं को यह

पत्थर से फोड़ता है। अब सवाल यह उठता है कि यह समुद्र के किनारे तो जाता नहीं फिर यह पत्थर कहाँ से लाता होगा? पत्थर की व्यवस्था करने के लिए ऊदबिलाव समुद्र की तली में जाता है। जब एक बढ़िया पत्थर बनाम औज़ार मिल जाता है तो फिर वह उसको काफी सम्भालकर रखता है। समुद्री ऊदबिलाव उस पत्थर को बगल में दबाकर रखता है। जब शिकार हाथ लगता है तो उसे मुँह में दबाकर पत्थर पर दे मारता है। इस प्रकार जीव का कवच टूट जाता है।



फिंच का कमाल

फिंच एक चिड़िया का नाम है। यह गैलापगोस द्वीप पर पाई जाती है। फिंच कीटों को पकड़ने के लिए नागफनी या कैक्टस के काँटों का उपयोग करती है। शिकार करने के दौरान यह चिड़िया अपनी चोंच में कैक्टस का काँटा दबाकर किसी दरार में से कीट को निकालकर खा जाती है। हमारे यहाँ भी एक ऐसी चिड़िया है जिसके शिकार करने का तरीका काफी निराला है। इसे कसाई चिड़िया या बूचर बर्ड नाम से जाता है। यह पूरे भारत में पाई जाती है। यह आमतौर पर खेतों और सड़क के किनारे टेलीफोन के तारों पर बैठी दिख जाएगी। यह चिड़िया अपने शिकार को पकड़ने के लिए बबूल के काँटों का इस्तेमाल करती है। बूचर बर्ड अपने शिकार को कांटों में पिरोकर किसी पेड़ के तने पर लटका देती है। और फिर उसे नोंच-नोंचकर खाती है।

चिपांजी की अक्लमंदी

चिपांजी को दीमक खाने का बड़ा शौक होता है। लेकिन बाँबी से दीमक निकालना उसके बस की बात नहीं होती। इसलिए वह एक तरकीब काम में लेता है। वह एक टहनी लेता है, उसे आगे से चबा लेता है ताकि उसके रेशे फैल भी जाएँ और उसके थूक से गीले भी हो जाएँ। फिर यह टहनी वह दीमक की बांबी में घुसाता है। टहनी के चबाए हुए गीले सिरे पर पच्चीस पचास दीमकें चिपक जाती हैं। टहनी निकालकर वह आराम से कुल्फी या आइसक्रीम की तरह दीमक खा लेता है।



कठफोड़वा भी पेड़ की दरारों से कीड़े निकालने के लिए इसी तरह का 'औज़ार' काम में लेता है।

- के.आर.शर्मा

नाव लहर में

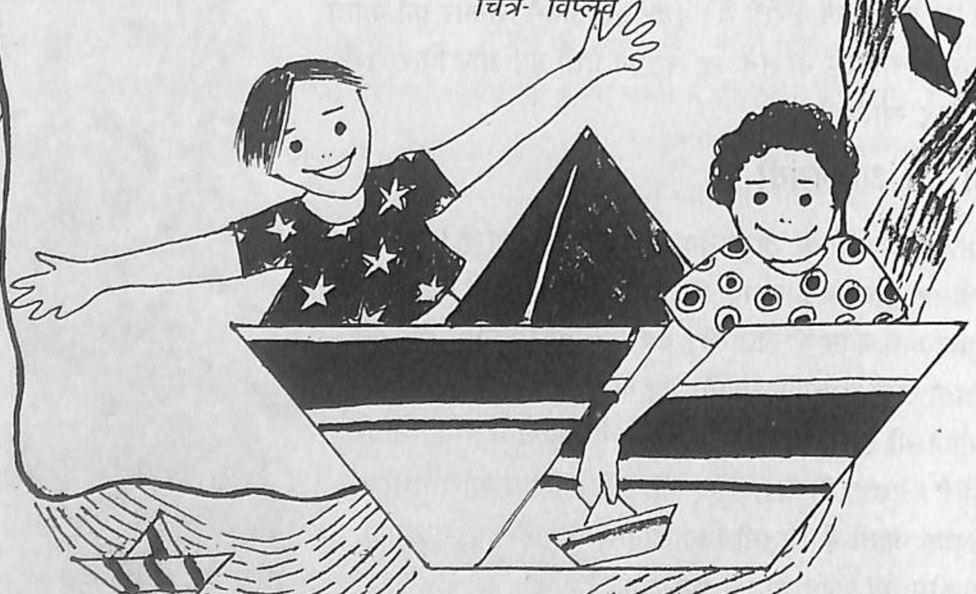
नाव लहर में मचल रही है
धीरे-धीरे उछल रही है
कभी बड़ी तेज़ी से बढ़ती
कभी-कभी वह सँभल रही है।

चलती जाती दूर-दूर तक
बहती जाती दूर-दूर तक
नाव हमें लगती है सुंदर
कहीं सैर को निकल रही है।

जाएगी वह खूब दूर तक
अपना रस्ता बदल रही है।

- प्रयाग शुक्ल

चित्र- विप्लव



बारिश की कहावतें

मौसम की गति निराली होती है। उसके बारे में चाहे पुराने हों, चाहे नए वैज्ञानिक सिर्फ अनुमान लगा सकते हैं। घाघ-भड्डरी के मौसमी दोहे प्रसिद्ध हैं। उन्होंने सूर्य, चंद्रमा आदि नक्षत्रों और मौसमों का गहराई से अध्ययन किया और इसके आधार पर कई अनुमान लगाए ताकि साधारण लोग भी मौसम के बारे में अंदाज़ा लगा सकें।

यहाँ हम घाघ-भड्डरी के बारिश से सम्बन्धित कुछ दोहे दे रहे हैं। ये दोहे बारिश के बारे में घाघ-भड्डरी के अनुमान भर ही हैं। ये अक्सर सही हुए हैं। कई बार नहीं भी हुए होंगे। तुम इन्हें खुद जाँच कर देखो कि इस बार की बारिश में ये कितने सही बैठते हैं।

बादर ऊपर बादर धावै। कह भड्डर जल आतुर आवै।।

यदि आकाश में बादल के ऊपर बादल दौड़ते दिखायी पड़ें तो भड्डरी का कहना है कि जल्दी ही बारिश होगी।

धनुष पड़े बंगाली। मेह साँझ-सकाली।।

यदि बंगाल (पूरब दिशा) की ओर इन्द्रधनुष दिखे तो बारिश शाम से लेकर सुबह तक ज़रूर होगी। इसका मतलब है कि शाम को पूरब दिशा में इन्द्रधनुष दिखाई दे जाय तो रातभर बारिश होगी।



रौनक खान, आठवीं, देवास, म.प्र.

बोले मोर महातुरी, खाँटी होय जु छाछ।
मेह महीपर परन को, जानौ काछे काछ।।

यदि मोर आतुर होकर बोलने लगे और मट्ठा खट्टा हो जाय तो समझ लो कि बारिश बस होने ही वाली है।

मेदिनी, मेघा, भैंस, किसान। मोर, पपीहा, घोड़ा, धान।
बाढ्यो मच्छ लता लपटानी। दसौ सुखी जब बरसै पानी।।

पृथ्वी, मेंढक, भैंस, किसान, मोर, पपीहा, घोड़ा, धान, मछली और लता ये दसों तब सुखी होते हैं, जब पानी बरसता है।

चकमक समाचार

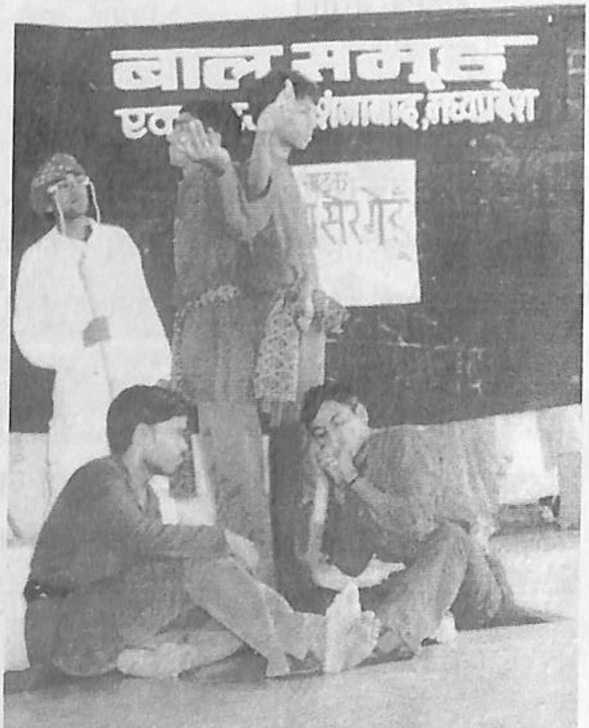


'सवा सेर गेहूँ' खेला गया

एक गाँव में शंकर नामक एक किसान रहता था। शंकर सोचता था कि भले खुद भूखा रह जाए पर घर से कोई साधु भूखा नहीं जाना चाहिए। एक बार उसके घर एक साधु आया। उस दिन शंकर के घर खाने के लिए कुछ नहीं था। शंकर पूरे गाँव में अनाज उधार लेने के लिए गया पर उसे कहीं कुछ नहीं मिला। अंततः शंकर गांव के एक साहूकार (विप्र) से सवा सेर गेहूँ उधार लेता है। शंकर हर साल उसे खलिहानी देता था। इस बार खलिहानी के साथ कुछ ज़्यादा अनाज देकर उसने अपने आप को ऋणमुक्त समझ लिया। इस दौरान शंकर और उसका भाई घर का बँटवारा करके अलग-अलग हो गए। घर की सब चीज़ें बँट गईं। शंकर किसान से मज़दूर बन गया। सात साल बाद विप्र शंकर को सवा सेर गेहूँ का हिसाब दिखाता है। यह सवा सेर गेहूँ साढ़े पाँच मन हो गए थे। यह छोटा सा कर्ज़ शंकर को बहुत मँहगा पड़ा।

शंकर कर्ज़ नहीं चुका पाता। और उसे साहूकार बंधुआ मज़दूर बना लेता है। एक ऐसा मज़दूर जिसके जिम्मे सिर्फ गुलामी होती है। और उसके बदले में उसे मिलता है बस आधा अधूरा खाना। बंधुआ मज़दूरी करते-करते ही शंकर की मौत हो जाती है पर उसका कर्ज़ नहीं खत्म होता। शंकर की मौत के बाद साहूकार उसके बेटे को भी बंधुआ मज़दूर बना लेता है।

यह प्रेमचंद द्वारा लिखित कहानी है। लेकिन हम यहाँ सिर्फ इस कहानी की बात नहीं कर रहे हैं। दरअसल इस कहानी को एक नाटक के रूप में होशंगाबाद के कई गांवों के नुक्कड़ों पर जून के महीने में खेला गया। सालों पहले बंधुआ मज़दूरी पर लिखी गई यह कहानी आज भी हमारे आस-पास घटित होती लगती है। इस कहानी का नाट्य रूपांतरण बाल समूह की एक दस दिवसीय नाटक कार्यशाला में किया गया। इसका निर्देशन जानी कुट्टी ने किया। इप्टा हरदा के संजय तथा कानपुर



के रंगकर्मी उमर ने इस काम में मदद की। **बाल समूह** एकलव्य का एक कार्यक्रम है जिसके तहत बच्चों में रचनात्मकता को उभारने के लिए कई गतिविधियाँ की जाती हैं। नाटक भी इनमें से एक है। हर साल बाल समूह नाटक कार्यशाला का आयोजन करता है। कार्यशाला में तैयार नाटक का प्रदर्शन गाँवों में और शहरों में किया जाता है। इस साल तैयार नाटक का प्रदर्शन होशंगाबाद ज़िले के तीन गांवों रैसलपुर, महेन्द्रबाड़ी तथा बागरा तवा में किया गया। तीन शो शहर में भी किए गए। सैकड़ों लोगों ने नाटक देखा।



कुल मिलाकर प्रशिक्षण दो तरह का हो गया। एक तो अभिनय का प्रशिक्षण और दूसरा मुद्दे पर समझ बनाने का। दस दिन में यह सब काम संभव होना बड़े साहस का काम था। ज़िले में चल रहे 18 बाल समूहों से आए 20-25 युवक-युवतियों ने इस काम को आसान कर डाला। बाल समूहों के गांवों में ही नाटक करना था इसलिए तैयारी भी खूब की गई। यह सोचकर भी कि कहीं अपने ही गांव में हंसी के पात्र न बन जाएँ। लेकिन मेहनत रंग लाई। नाटक ने लोगों पर खूब प्रभाव छोड़ा। कई गांवों में टीम को लोगों ने पुरस्कार भी दिए। एक स्वयंसेवी संस्था ग्राम सेवा समिति ने पूरे समूह को उपहार दिए।

इस नाटक का अंतिम शो होशंगाबाद के *सेठानी घाट* पर हुआ। *सेठानी घाट* नर्मदा का एक प्रसिद्ध घाट है जहाँ शाम को लोग इकट्ठे होते हैं। करीब चार सौ लोगों ने यह नाटक देखा। बाल समूह को खूब प्रोत्साहन मिला। अगले साल किसी एक नाटक की तैयार की आशा के साथ लोग विदा हुए।

रपट - शिवनारायण गौर

पप्पू- मम्मी, ये गणित का सवाल पापा से पूछ लूँ?
मम्मी- नहीं! सुबह दूधवला आएगा, उससे पूछ लेना।

●

माधोजी (छाते की दूकान में) भैया, कुछ देर पहले मैं अपना छाता आपकी दूकान में भूल गया था।
पप्पू- दादाजी! आप लड्डू खा सकते हैं?
दादाजी- नहीं बेटा। मेरे मुँह में दाँत कहाँ हैं?
पप्पू- तो ज़रा मेरा लड्डू पकड़िए, मैं अभी आता हूँ।

माँ– रात को दो लड्डू थे यहाँ। अब एक ही कैसे रह गया?
पप्पू- अँधेरे में दूसरा मुझे दिखा नहीं।

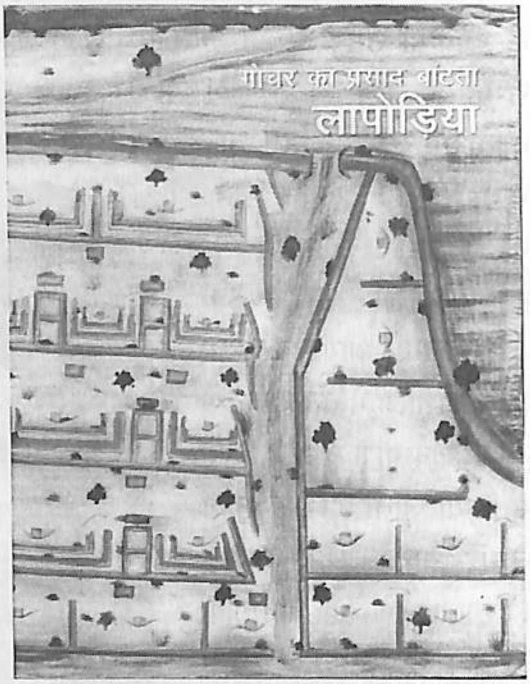


●

पापा- पप्पू बताओ, हवा और पवन में क्या फर्क होता है।
पप्पू- यह तो बड़ा आसान है पापा। जो हवा जल्दी में होती है उसे पवन कहते हैं।

गोचर का प्रसाद बाँटता

लापोड़िया



यह माना जाने लगा है कि सूखा, बाढ़, भूकम्प जैसी प्राकृतिक बलाओं से हम तभी लड़ सकते हैं जब सरकार हमारी मदद करे। लेकिन सरकार की मदद के बिना भी आपस में मिल-जुलकर और सूझबूझ से प्राकृतिक बलाओं का सामना किया जा सकता है। यह साबित किया लापोड़िया गाँव के लोगों ने। राजस्थान के जयपुर ज़िले के गाँव *लापोड़िया* ने।

इस गाँव पर पर्यावरणविद् अनुपम मिश्र ने एक किताब लिखी है। किताब का नाम है 'गोचर का प्रसाद बाँटता लापोड़िया।' गोचर यानि गो + चर = गाय (और दूसरे जानवरों) के चरने की जगह। गाँव के सभी जानवर इस ज़मीन पर घास चरने जाते हैं। अनुपम ने इस किताब की शुरुआत में लिखा है -

सन् 2004 - जयपुर ज़िले के एक छोटे-से गाँव लापोड़िया के लिए इस तारीख का, इस सन् का मतलब है 4 और 2 यानि 6 साल का अकाल। आसपास के बहुत सारे गाँव इस लम्बे अकाल में टूट चुके हैं, लेकिन लापोड़िया आज भी अपना सिर, माथा उठाये मजबूती से खड़ा हुआ है। .... मेहनत ने आज 6 साल के अकाल के बाद भी लापोड़िया को अपने पसीने से सींचकर हरा-भरा बनाया है।... कोई भी समाज शून्य में जीवित नहीं रह सकता। उसे अपने लोगों, अपने पशुओं, अपनी ज़मीन, अपने पेड़-पौधों, अपने कुएँ, अपने तालाबों, अपने खेतों के लिए कोई न कोई ऐसी व्यवस्था बनानी पड़ती है, जो समयसिद्ध (देर तक चलने वाली) और स्वयंसिद्ध हो।

शुरू-शुरू में लापोड़िया के दो युवकों ने हिम्मत दिखाई। वे अपने टूटे-फूटे तालाबों को अकेले ही गेंती, फावड़ा और तगारी लेकर सुधारने में जुट गए। इन युवकों की कड़ी मेहनत और लगन देखकर और लोगों ने भी इनके साथ मेहनत करने का फैसला लिया। धीरे-धीरे लोग जुटते गए और उनका अनुभव भी। लापोड़िया के लोगों ने मिल-जुलकर अपनी मेहनत से गाँव के तालाब सुधारे। गोचर सुधारा। और पूरे गाँव को हरा-भरा कर दिया। अब बारिश का पानी तालाबों में इकट्ठा होने लगा। इससे घरों में उपयोग के लिए पानी मिला। खेती के लिए पानी मिला। गोचर के हरा-भरा होने से प्रदूषण पर रोक लगी। जानवरों को भरपेट चारा मिलने लगा। गाय, भैंस, बकरी भरपूर दूध देने लगे। आज लापोड़िया की अपनी दूध उत्पादक सहकारी संस्था है जहाँ हर दिन कम से कम 1600 लीटर दूध इकट्ठा होता है। घर-परिवार और बच्चों की ज़रूरत पूरी होने के बाद बचे दूध को बेच दिया जाता है। लापोड़िया के तालाबों में पानी भरने और गाँव के हरा-भरा होने से यहाँ पशु-पक्षियों की संख्या बढ़ गई है। मोर, कोयल, पपीहा, खरगोश, नेवला, जंगली बिल्ली, गिलहरी यहाँ सुबह-शाम दिखाई पड़ते हैं। इससे गाँव की सुन्दरता भी बढ़ गई है।

खुला चिड़ियाघर - लापोड़िया और उसके आसपास के लगभग छः-सात गाँवों में खुले चिड़ियाघर बनाए गए हैं। इन चिड़ियाघरों में पशु-पक्षियों को



उजड़ चुके गोचर को फिर से हरा-भरा बनाने के लिए मन का नक्शा ज़मीन पर उतारते लापोड़िया के लोग

कहीं से लाकर इकट्ठा नहीं किया गया। बल्कि अपने आसपास के वातावरण के लिए लोगों को जागरूक होकर व्यवहार करने का सुझाव दिया गया जिससे पशु-पक्षियों की संख्या अपने आप बढ़ने लगी। इन लोगों ने यह देखा था कि गाँवों या शहरों में कहीं-कहीं घरों या मंदिरों में तोता, चिड़िया, कबूतरों या दूसरे पक्षियों के लिए दाना-पानी डाला जाता है। उनके बैठने की व्यवस्था की जाती है। घरों में उनके लिए छीके लगाए जाते हैं। कहीं-कहीं पेड़-पौधे लगाए जाते हैं। घर की दीवारों पर पक्षियों के चित्र बनाए जाते हैं। शहरों में चीलों को पकौड़ी खिलाते हैं। खरगोशों को प्यार से पाला जाता है। इन सब व्यवहारों से यह पता चला कि पर्यावरण और पक्षियों के महत्व को लोग समझते हैं।

लेकिन ऐसे लोगों की संख्या बहुत कम है। ऐसे लोगों की संख्या बढ़ाने के लिए ही इन लोगों ने खुला चिड़ियाघर बनाने का सुझाव दिया। इस सुझाव में यह है कि लोग अपनी-अपनी जगहों पर पेड़-पौधों को काटना बंद कर दें। पशु-पक्षियों को मारना बंद करें। पेड़-पौधे लगाएँ। पशुओं के संरक्षण पर ध्यान दें। इससे उनका पूरा गाँव या पूरा शहर चिड़ियाघर हो जाएगा, एक खुला चिड़ियाघर।

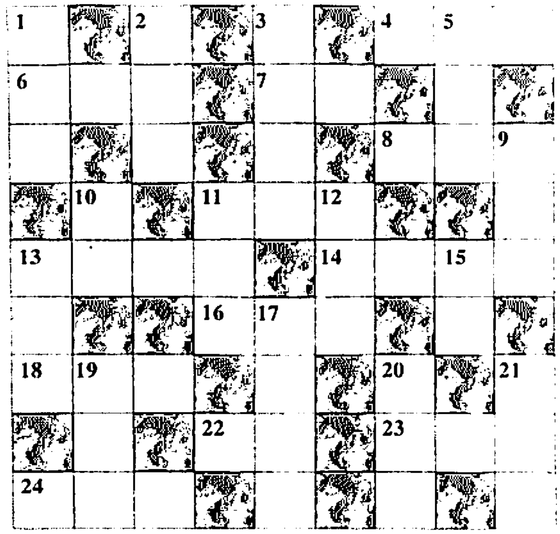
लापोड़िया में पिछले 15 सालों से पेड़ों को काटना या जंगली जीवों का शिकार बंद है। बिना चौकीदारी के भी गाँव के लोग शिकार नहीं करते। यदि दूसरे गाँव के लोग भूलचूक से शिकार करने आ जाते हैं तो गाँव के लोग उन्हें सज़ा देते हैं। शिकारी को पाँच हज़ार रुपए और 5 किलो अनाज पक्षियों के लिए देना होता है। ऐसा ही लापोड़िया के आसपास के ग्राम नगर, सेल सागर, बालापुर, केरीया सीतापुर, मँहतगाँव, बिनी खेड़ा में भी होता है।

यह सब करने के लिए इन लोगों ने बड़े-बड़े बाँध नहीं बनाए। लोगों को अपने गाँवों से भगाया नहीं। यह सब आपसी सूझबूझ और थोड़ी-सी मेहनत से अपने आप होता चला गया।

अगर तुम्हें लापोड़िया के खुला चिड़ियाघर के बारे में और अधिक जानकारी चाहिए, हमें चिट्ठी लिखना। ●

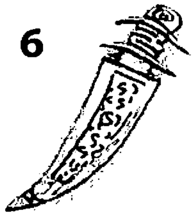
चित्र-पहेली

बाएँ से दाएँ



4 खुदा, रब, भगवान .....

6

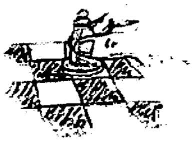


7 2 x (4+1)

8



11

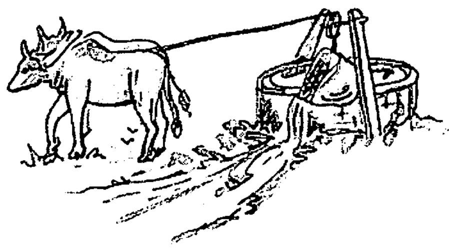


13



14 तिरंगे झण्डे का सबसे ऊपरी रंग

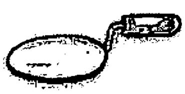
16



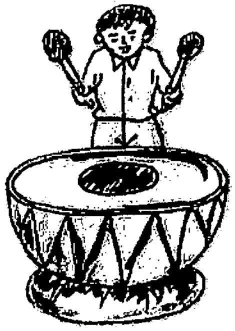
18



22



23

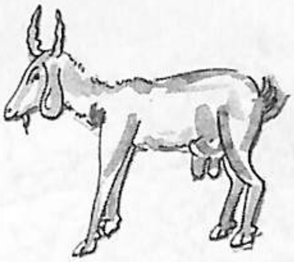


24

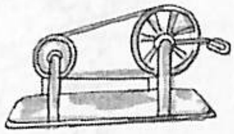


संकेत ऊपर से नीचे

1



2



3 वह जगह जहाँ ईद की नमाज़ अदा की जाती है.....

5 साँस लेने व छोड़ने की क्रिया

9



10 एक जानवर ऐसा
जिसकी दुम पर पैसा

11



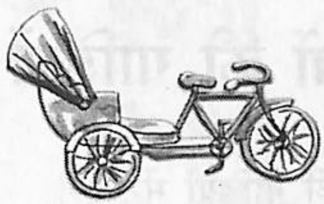
12



13



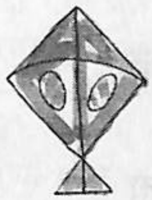
15



17



19



20



21 प्रशंसा, तारीफ......

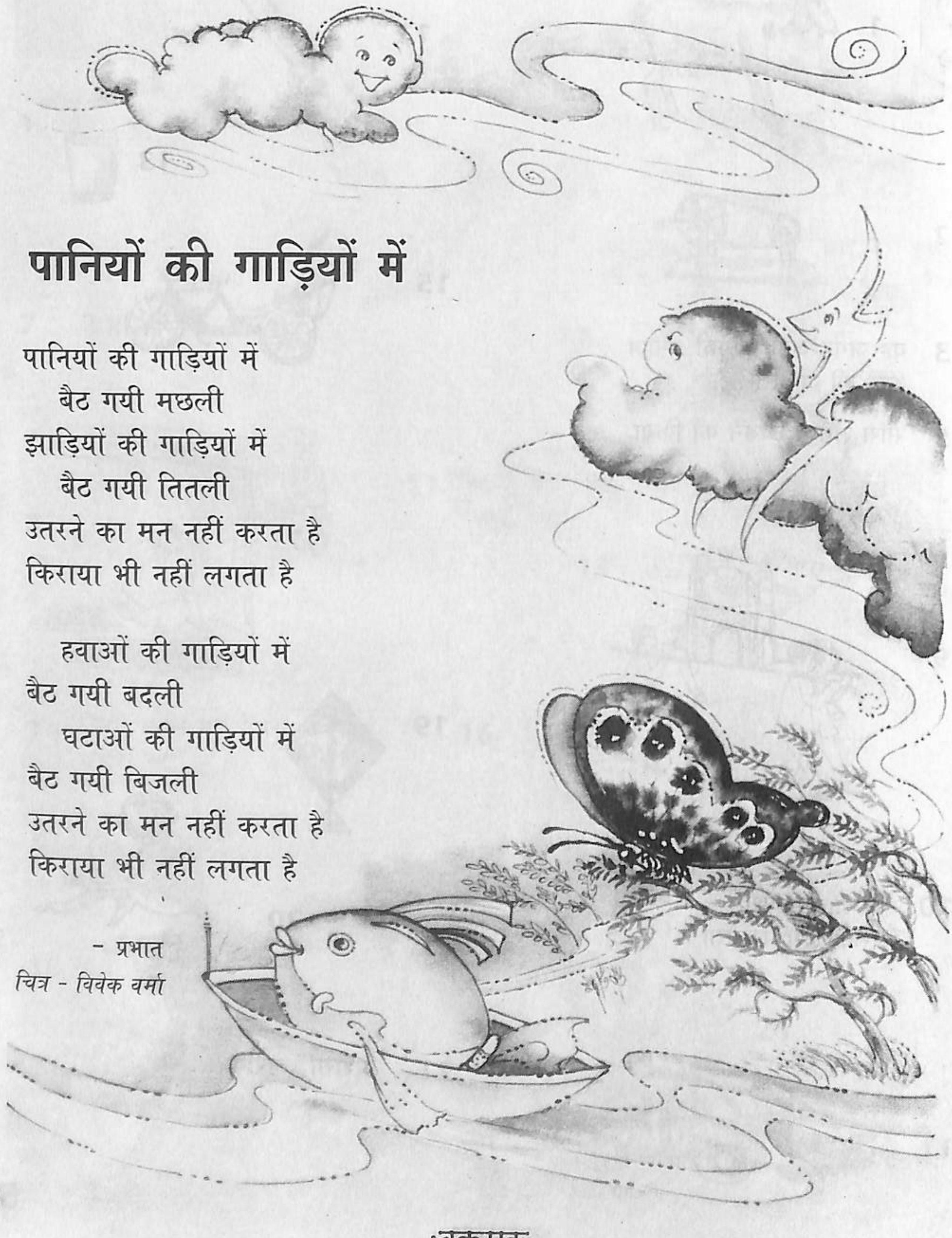
पानियों की गाड़ियों में

पानियों की गाड़ियों में
बैठ गयी मछली
झाड़ियों की गाड़ियों में
बैठ गयी तितली
उतरने का मन नहीं करता है
किराया भी नहीं लगता है

हवाओं की गाड़ियों में
बैठ गयी बदली
घटाओं की गाड़ियों में
बैठ गयी बिजली
उतरने का मन नहीं करता है
किराया भी नहीं लगता है

- प्रभात

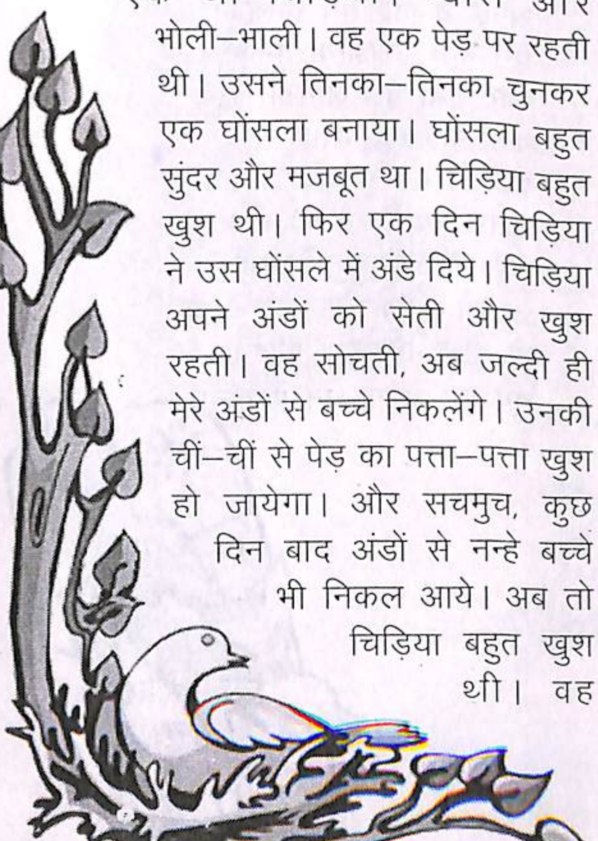
चित्र - विवेक वर्मा





चिड़िया और लोमड़ी

दागिस्तानी लोककथा



एक थी चिड़िया। प्यारी और भोली–भाली। वह एक पेड़ पर रहती थी। उसने तिनका–तिनका चुनकर एक घोंसला बनाया। घोंसला बहुत सुंदर और मजबूत था। चिड़िया बहुत खुश थी। फिर एक दिन चिड़िया ने उस घोंसले में अंडे दिये। चिड़िया अपने अंडों को सेती और खुश रहती। वह सोचती, अब जल्दी ही मेरे अंडों से बच्चे निकलेंगे। उनकी चीं–चीं से पेड़ का पत्ता–पत्ता खुश हो जायेगा। और सचमुच, कुछ दिन बाद अंडों से नन्हे बच्चे भी निकल आये। अब तो चिड़िया बहुत खुश थी। वह बच्चों के लिए दाना–पानी लाती। उन्हें लाड़–दुलार करती। चोंच से दुलराते हुए उन्हें गाना सुनाती–

चिड़िया गाये गुन–गुन
मेरे बच्चे मेरी धुन
पत्ता–पत्ता मेरा प्यार
पेड़ की गोदी में घरबार
मेरे पंखों की सर–सर
दूर न बच्चों से पल भर
मैं तो गाना गाऊँगी
बच्चों को दुलराऊँगी

चिड़िया का जीवन मज़े में गुजर रहा था। वह अपने प्यारे पेड़ पर बने अपने मजबूत घोंसले में बच्चों के साथ खुश थी। बच्चों के साथ चिड़िया का दिन कब शुरू होता और कब खत्म हो जाता, उसे कुछ पता नहीं चलता था। तभी एक दिन वहाँ एक लोमड़ी आई। लोमड़ी बहुत धूर्त थी। वह समझ गई कि चिड़िया भोली और सीधी है और उसका घोंसला बच्चों से भरा है। उसके मुँह में पानी आ गया। चिड़िया के बच्चों

को हथियाने के लिए धूर्त लोमड़ी उसी पेड़ के नीचे बैठ गई और गाना गाने लगी–

सुन री मूरख चिड़िया सुन
तू क्यों गाये मेरी धुन
यह सारा जंगल है मेरा
यह पेड़ भी मेरा है
मेरे पेड़ पर आखिर तूने
कैसे किया बसेरा है
बदले में इसके बच्चा दे
जल्दी ऊपर से टपका दे
नहीं तो काटूँ पेड़ अभी
मरें पेड़ के साथ सभी



लोमड़ी का गाना सुनकर चिड़िया डर गई। उधर, लोमड़ी चिड़िया को धमकाने के लिए जोर–जोर से यह गाना गाने लगी। आखिर अपने प्यारे पेड़, प्यारे घोंसले और बाकी बच्चों को बचाने के लिए चिड़िया ने अपना सबसे छोटा बच्चा लोमड़ी को दे दिया। लोमड़ी चिड़िया का बच्चा मुँह में दबाकर भाग गई। लेकिन अगले दिन लोमड़ी फिर आ गई और पेड़ के नीचे बैठकर वही गाना गाने लगी। चिड़िया फिर डर गई और उसने अपना दूसरा बच्चा भी लोमड़ी को दे दिया।

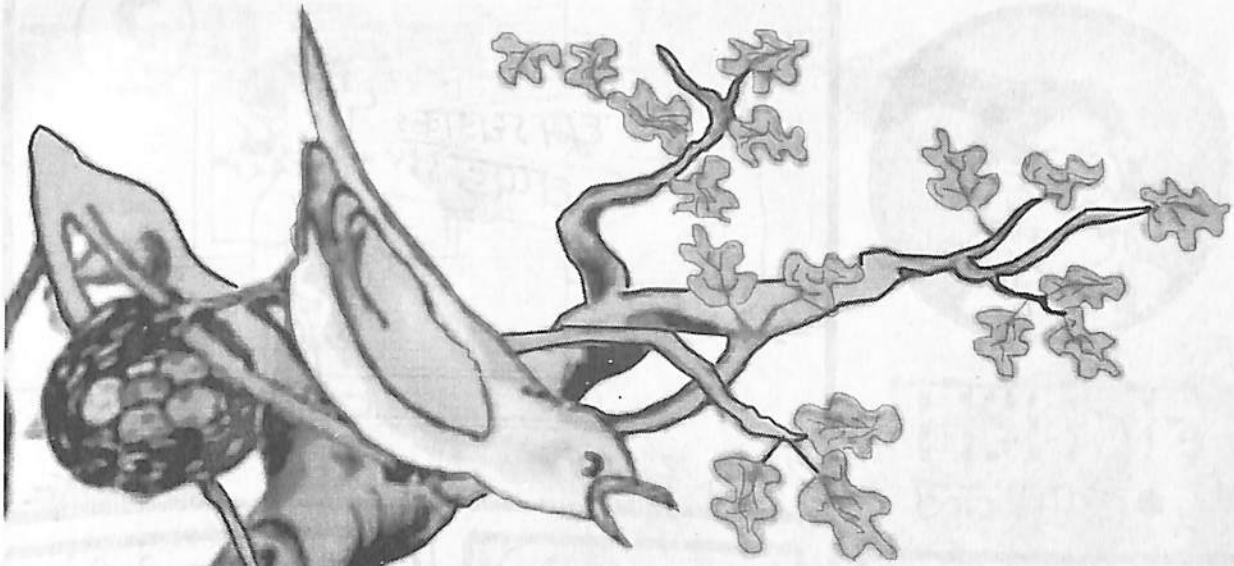
चिड़िया बहुत दुखी थी। वह समझ नहीं पा रही थी कि अपने बाकी बच्चों को लोमड़ी से कैसे बचाये। उसे हमेशा लोमड़ी के आने का डर लगा रहता। चिड़िया बहुत ही दुखी थी। एक दिन चिड़िया अपने दुख को गाकर मन हल्का करने की कोशिश कर रही थी–

मैं कैसी दुखियारी चिड़िया
मेरे घौंसले में अंधियारा
मैं हूँ दुख की मारी चिड़िया
दुष्ट लोमड़ी जब भी आए
मेरा बच्चा चट कर जाए
कैसे बचाऊँ बच्चे अपने
कैसे अपना पेड़ बचाऊँ
मैं दुखियारी चिड़िया अपना
दुखड़ा जाकर किसे सुनाऊँ?

चिड़िया के दुख का गीत पेड़ ने सुना। पेड़ पर बैठी चिड़ियों ने सुना। सब चिड़ियाँ उड़कर दुखी चिड़िया के पास आईं। वे चिड़िया को अपने–अपने ढंग से समझाने लगीं। उन्हें इस सीधी–साधी और भोली चिड़िया पर बड़ा तरस आया। सब चिड़ियों ने उसके दुख को दूर करने के लिए मिलकर गाना गाया–

सुन ओ भोली–भाली चिड़िया
मीठा गाने वाली चिड़िया
धूर्त लोमड़ी ने धमका कर
उल्लू खूब बनाया तुमको
समझ न पाई तुम चालाकी
ऐसे कुछ उलझाया तुमको
काटे कैसे पेड़ लोमड़ी
कहाँ कुल्हाड़ी उसके पास
पेड़ पर चढ़ न पाये लोमड़ी
उससे क्या डरने की बात
अब जो आये धूर्त लोमड़ी
उसको जमकर फटकार लगाना
वो चीखे–चिल्लाये जितनी
तुम बस अपनी धुन में गाना







दुखी चिड़िया की आँखें खुल गयीं। वह समझ गयी कि लोमड़ी ने उसे मूर्ख बनाया है। उसने अपनी सहेली चिड़ियों को धन्यवाद दिया और उनसे वादा किया कि अब वह लोमड़ी से नहीं डरेगी और उसे खूब खरी–खोटी सुनायेगी।

अगले दिन धूर्त लोमड़ी फिर आ गयी और अपना बेसुरा गाना गाने लगी। चिड़िया ने सुना तो उसने लोमड़ी को जमकर फटकारा–

धूर्त लोमड़ी सुन–सुन–सुन
मैं तो गाऊँ अपनी धुन
तेरे झांसे में न आऊँ
मैं तो अपनी धुन में गाऊँ
पेड़ क्या तू काटेगी दुम से
हाथ ही धो बैठेगी दुम से
दुम दबा के भाग ले लोमड़
कट जाये दुम तेरी लोमड़

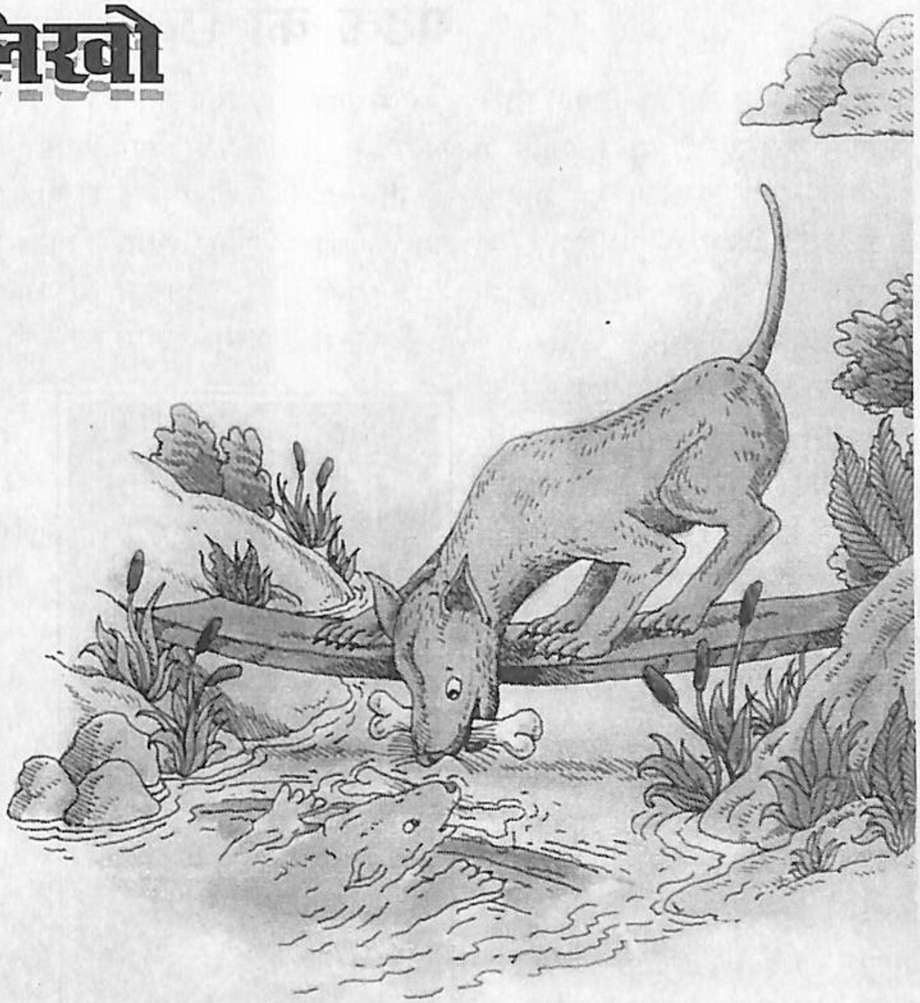


लोमड़ी चिड़िया का गीत सुनकर आगबबूला हो गयी। वह बहुत चिल्लायी। चिड़िया को धमकाया मगर चिड़िया उसे चिढ़ाती रही। अंत में लोमड़ी अपना–सा मुँह लेकर वहाँ से चली गयी।

प्रस्तुति- नरेन्द्र कुमार


नताशा
• देवांशु वत्स
?
धूम ऽधड़ाकऽ
थप्पड़ ऽऽऽ
अरे अंकल, टिक्कू को क्यों पीट रहे हैं?
HERO
...क्या इसने शरारत की है?
नहीं नताशा, ऐसी बात नहीं है...
© DEVANSHU VATSA
फिर?
दरअसल मैं आज एक हफ्ते के लिए आगरा जा रहा हूं...
...और कल इसकी परीक्षा का परिणाम निकलने वाला है!!
!!
HERO

कहानी लिखो



इस चित्र को देखकर क्या तुम्हें कोई कहानी सूझती है? झटपट हमें लिख भेजो। कहानी का शीर्षक और अपना नाम, पता ज़रुर लिखना। सबसे अच्छी कहानी को हम चकमक में छापेंगे।

अधूरी कविता पूरी करो

एक सरल-सी कविता के बीच के शब्द कहीं खो गए हैं। क्या उन्हें तुम ठीक से भर सकते हो? ऐसे ही एक-दो और छन्द इसमें जोड़ सको तो क्या बात है!

फिर पूरी कविता हमें भेजना। हम उसे चकमक में छापेंगे।

चन्दू के चाचा ने चन्दू की चाची को,
चाँदनी चौक में चटनी चटायी।

कक्कू के..
....

मुन्नू के मामा ने मुन्नू की मामी को,
मेरठ में मावा मलाई खिलायी।

नन्नू के नाना ने नन्नू की नानी को,
....

मेंढक की छतरी

बारिश का नाम लेते ही कितनी चीज़ें आँखों में झूल जाती हैं जैसे खुलते स्कूल, छाता, मेंढक, गेड़ी ... आसपास बड़ी जल्दी में उग आए कितने ही पेड़-पौधे! इन्हीं में से एक चीज़ है मशरूम! ये जो मशरूम महाशय हैं उनके कई नाम हैं। किसी इलाके ये जनाब भमोड़ी कहलाते हैं तो किसी में खुम्बी तो कहीं कुकुरमुत्ता। इनका एक नाम तो और भी मज़ेदार है मेंढक की छतरी! ये नाम शायद इसलिए पड़ा हो कि ये महाशय मशरूम और मेंढक लगभग साथ-साथ दिखना शुरू होते हैं। मशरूम को कुकरमुत्ता कहने की वज़ह शायद यह है कि कुछ लोग मानते हैं जहाँ कुत्ता पेशाब करेगा वहीं कुकुरमुत्ता उग जाएगा। हालाँकि तुम तो जानते हो कि यह सच नहीं है। यह तो एक किस्म का पौधा ही है। और यह भी बीज जैसी एक रचना से उगते हैं। इन्हें **स्पोर** कहा जाता है। वैसे ये महाशय फफूँद परिवार के सदस्य हैं। फफूँद दरअसल पौधों की तरह के ही जीव हैं। पर ये अन्य पौधों की तरह न तो हरे होते हैं और न ही इनमें पौधों की तरह जड़ें, तने या पत्ती का ढाँचा होता है। तो हम बात कर रहे थे कि ये मशरूम महाशय फफूँद परिवार के सदस्य हैं। इस परिवार में रोटी पर या काई वाली जगह पर उगने वाले फफूँद के अलावा आटे में डलने वाला खमीर भी आता है।



फफूँद का मुख्य हिस्सा होता है नलीनुमा एक भाग। यह उस आधार पर जाल की तरह फैला होता है जिसपर फफूँद उगा होता है। इस जाल की नलियों में से ही फफूँद के बीज या स्पोर निकलते हैं। स्पोर के बिखरने पर इनमें से नए फफूँद उग आते हैं। मशरूम फफूँद का एक ऐसा ही अंग है जो नलियों से उगता है और जिसमें से फिर स्पोर निकलते हैं। यानी मशरूम तो सिर्फ फफूँद का स्पोरवाला हिस्सा भर है। फफूँद का मुख्य भाग उसकी नालीदार जाली है। यही जाली अपने आधार के जीवित या जैविक चीज़ों से भोजन चूसती है यानी वे परजीवी हैं। पेड़ पौधों की तरह अपना भोजन खुद नहीं बनाते हैं।

मशरूम की उमर कितनी होती है? मशरूम की उमर उसको मिल रहे भोजन और वातावरण की नमी तथा गर्मी पर निर्भर करती है। अगर भोजन ठीकठाक मिलता रहे और मौसम भी ठण्डा रहे तो यह साल दर साल ज़िन्दा रह सकता है।

मशरूम है बड़े काम की चीज़! वैसे तो प्रकृति में सबका अपना महत्व है। जैसे तुम्हारा-हमारा वैसे ही इन अन्य जीवों का!

हमारे लिए उपयोग की बात करें तो मशरूम की कई प्रजातियाँ खाने के काम आती है। इनकी लजीज सब्जी तो तुमने भी खाई होगी। इन्हें कई जगह तो बड़े स्तर पर उगाया जा रहा है। सदियों से जंगल में रहने वाले आदिवासी लोग हमसे इस बात में भी बहुत आगे हैं। वे ज़माने से इन भमोड़ियों, खुम्बियों को खाते आए हैं। हालाँकि सभी मशरूम खाने लायक नहीं होते हैं। कुछ तो इतने जहरीले होते हैं कि उन्हें खाने पर व्यक्ति गंभीर रूप से बीमार हो सकता है। ●



ये छोटे-छोटे से छत्ते गिरे हुए पेड़ों के तनों पर उगते हैं।



यह एक जहरीला मशरूम है। इसका नाम है - एमेनिटा मसकेरिया। जैसे-जैसे इसकी उमर बढ़ती है इसका आकार छोटा होता जाता है।



पतझड़ी जंगलों में उगने वाला प्रिंस मशरूम। पीसने या तोड़ने पर बादाम-सी खुशबू आती है। खाने में बेहद स्वादिष्ट।



क्या कहा? चिड़ियों के घोंसले और अण्डे। नहीं जनाब ये भी एक तरह के मशरूम ही हैं।



गाय, बैल के गोबर या घोड़े आदि के लीद पर उगने वाला मशरूम। सफेद महीन चूर्ण से ढँका रहता है।



क्या पड़े हैं यहाँ? संतरे के छिलके। नहीं जनाब, ये भी एक मशरूम हैं। इसका नाम है ऑरेंजपील।

चकमक पंजीयन क्रमांक 50309/85 के अंतर्गत भारत के समाचार पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत। डाक पंजीयन क्रमांक म.प्र. /261/भोपाल/2003-05

रैक्स डी. रोज़ारियो की ओर से विनोद रायना द्वारा राजकमल प्रिंटर्स से मुद्रित एवं एकलव्य, ई-7/एच.आई.जी. 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल-16 से प्रकाशित। संपादक : विनोद रायना